Class: B.A. 3rd year | **Subject:** Music (Vocal/Instrumental)
Course Type: DSE 1B | **Course Code:** MUSA303TH
Course Name: Theroy | **Paper Type:** Theory Paper V

MUSIC
(Theory)

Lesson : 1 - 8

Dr.Nirmal Singh

Centre for Distance & Online Education (CDOE)
Himachal Pradesh University
Gyan Path, Summer Hill, Shimla-171005

विषय सूची

क्रम	इकाई	विषय सूची	पृ. सं
1		विषय सूची	2
2		प्राक्कथन	3
3		पाठ्यक्रम	4
4	इकाई 1	ताल और ताल के दस प्राण	5-15
5	इकाई 2	गायकों के गुण तथा अवगुण और आविर्भाव तिरोभाव	16-26
6	इकाई 3	तीन ताल	27-36
7	इकाई 4	रागों का समय सिद्धांत	37-48
8	इकाई 5	सितार और तानपूरा	49-65
9	इकाई 6	पं० भीमसेन जोशी और स्वर कोकिला लता मंगेशकर	66-77
10	इकाई 7	भारतीय शास्त्रीय संगीत मे प्रयुक्त तंत्री वाद्य यंत्रों की आधारभूत जानकारी	78-91
11	इकाई 8	ग्राम, मुर्च्छना व जाति और मार्गी तथा देशी संगीत	92-110
12		महत्त्वपूर्ण प्रश्न- कार्यभार	111

प्राक्कथन

संगीत स्नातक के नवीन पाठ्यक्रम के क्रियात्मक विषय के MUSA 303TH में संगीत से सम्बन्धित उपयोगी सामग्री का समावेश किया गया है। संगीत में प्रायोगिक तथा सैद्धान्तिक दोनों पक्षों का योगदान रहता है। गायन तथा वादन में भी इन्हीं दोनों पक्षों का महत्वपूर्ण स्थान रहता है। प्रस्तुत पाठ्यक्रम में संगीत की सैद्धान्तिक परीक्षा को ध्यान में रखकर पाठ्य सामग्री दी गई है।

इस पुस्तक के

इकाई । में ताल और ताल के दस प्राण आदि का वर्णन किया गया है।

इकाई 2 में गायकों के गुण तथा अवगुण और आविर्भाव तिरोभाव आदि का वर्णन किया गया है।

इकाई 3 में तीन ताल आदि का वर्णन किया गया है।

इकाई 4 में रागों का समय सिद्धांत आदि का वर्णन किया गया है।

इकाई 5 सितार और तानपूरा आदि का वर्णन किया गया है।

इकाई 6 में पं० भीमसेन जोशी और स्वर कोकिला लता मंगेशकर का वर्णन किया गया है।

इकाई 7 में भारतीय शास्त्रीय संगीत मे प्रयुक्त तंत्री वाद्य यंत्रों की आधारभूत जानकारी का वर्णन किया गया है।

इकाई 8 में ग्राम, मुर्च्छना व जाति और मार्गी तथा देशी संगीत का वर्णन किया गया है।

प्रत्येक इकाई में शब्दावली, स्वयं जांच अभ्यास प्रश्न तथा उत्तर, संदर्भ, अनुशंसित पठन, पाठगत प्रश्न दिए गए हैं।

प्रस्तुत पाठ्यक्रम को लिखने के लिए स्वयं के अनुभव से, संगीतज्ञों के साक्षात्कार से तथा संगीत से सम्बन्धित पुस्तकों द्वारा शिक्षण सामग्री एकत्रित की गई है। मैं उन सभी संगीतज्ञों तथा लेखकों का आभारी हूं जिनके ज्ञान द्वारा तथा जिनकी संगीत संबंधी पुस्तकों द्वारा शिक्षण सामग्री को यहां लिया गया है। आशा है कि विद्यार्थियों के लिए यह पुस्तक लाभप्रद होगी।

COURSE CODE MUSA303TH
B.A. 3rd Year

HINDUSTANI MUSIC (Vocal & Instrumental)

3 Lectures /week

Duration	Paper-V Theory (Unit-I)	Max Marks	Credits
3 hours.		50(35+15Assesment)	3

Title-Theory of Indian Music and study of ancient granthas and Rãgas.

There will be three sections, candidates shall have to answer one question from each section & two from any of the three sections thus five questions in all.

SECTION-I

1. Essays on the following topics

a. Folk music of H.P.

b. Modern trends in music

2. The relevance of time theory in Hindustani Classical Music

3. Biographies of Following Musicians

a. Pt. BhimSen Joshi

b. LataMangeshkar

SECTION-II

4. Study of Gram, Murchanna and Jati as treated in NatyaShastra and its relevance in present context.

5. Discuss the following:-

a. Avirbhav, Tirobhav

b. GayakKe Gun Avagun

c.MargiDesi

d.Tãal and Ten Prans of Taal (Das Praan)

SECTION-III

6. Basic Knowledge of stringed instrument used in Hindustani Classical Music

7. Write the Theka of Teental along with dugun, tigun and Chaugun

8. Make a diagram of Taanpura/Sitar and level its sections.

इकाई-1
ताल और ताल के दस प्राण

इकाई की रूपरेखा

1.1	भूमिका
1.2	उद्देश्य
1.3	ताल और ताल के दस प्राण
	स्वयं जांच अभ्यास 1
1.4	सारांश
1.5	शब्दावली
1.6	स्वयं जांच अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
1.7	संदर्भ
1.8	अनुशंसित पठन
1.9	पाठगत प्रश्न

1.1 भूमिका

संगीत (गायन तथा वादन) में, स्नातक के क्रियात्मक पाठ्यक्रम MUSA303 की यह पहली इकाई है। इस इकाई में संगीत, विशेष रूप से गायन और सितार वाद्य के संदर्भ में, ताल का अर्थ परिचय, ताल के प्राणों का विस्तृत अध्ययन किया गया है।

उत्तर भारतीय शास्त्रीय संगीत में रागों का प्रस्तुतिकरण विशेष रूप से होता है, जो सुनने में मधुरता से युक्त, कर्णप्रिय, वैचित्रतापूर्ण तथा आनंददायक होता है। आज के समय में शास्त्रीय संगीत के कलाकार रागों को अपने मंच प्रदर्शन के समय प्रस्तुत करते हैं। रागों में मधुरता और वैचित्र्य लाने के लिए अलंकारों का अभ्यास किया जाता है। अलंकारों के अभ्यास से गायक की आवाज मे परिपक्क्वता और वादक के वादन मे मधुरता और तैयारी साफ झलकती है। राग मे मधुरता और सौन्दर्य के साथ साथ ताल की समझ होना भी अति अवश्यक है। राग मे स्वरों मे मिठास का जितना महत्व है उतना ही राग मे ताल का भी अपना महत्व है। कलाकार या विद्यार्थी को ताल मे ताली, खाली, सम, आवर्तन मात्रा आदि का ज्ञान होना अत्यंत आवश्यक है।

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् विद्यार्थी ताल विषय का अर्थ परिभाषा और ताल के प्राणों के बारे मे विस्तार से अध्ययन कर पाएंगे तथा साथ ही सितार वादन पर ताल के साथ अभ्यास से अपने वादन मे मधुरता ला सकेंगे। विद्यार्थी इस विषय के अध्ययन के पश्चात स्वयं ताल मे लेकारियाँ और बोल बाँट जैसी चीजें बनाने मे समर्थ हो सकेंगे।

1.2 उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन करने के पश्चात् विद्यार्थी

- ताल शब्द का अर्थ समझ सकेंगे।
- ताल शब्द के अर्थ के साथ ताल मे सम, खाली और ताली का अर्थ समझ सकेंगे।
- ताल शब्द के अर्थ के साथ ताल मे मात्रा, लय, काल और आवर्तन का अर्थ समझ सकेंगे।

- सितार वाद्य पर ताल के साथ स्वयं रचित रचनाओं का तालबद्ध अभ्यास कर पाएंगे, जिससे उनके वादन मे निखार आएगा।

इन उद्देश्यों के माध्यम से, विद्यार्थी न केवल ताल के तकनीकी पहलुओं को जान पाएंगे, बल्कि इसके गहरे सांगीतिक, सांस्कृतिक और भावनात्मक महत्व को भी समझ सकेंगे। इससे उनके संगीत के प्रति दृष्टिकोण में गहराई और समृद्धि आएगी, साथ ही मंच प्रदर्शन मे परिपक्क्वता का अनुभव भी प्राप्त होगा, जो कि उनके भविष्य में सहायक सिद्ध होगा।

1.3 ताल और ताल के दस प्राण

प्रकृति का चक्र एक विशेष नियमबद्धता से बंधा है। यदि यह नियमबद्धता अथवा लय अनियमित हो जाये तो प्रलय की स्थिति आ सकती है। मनुष्य के शरीर को ही लीजिए, हृदय का नियमित लय में धड़कना ही उसे जिन्दा रखता है। हृदय की धड़कन अनियमित या बेलय हुई और अन्त पास आ गया।

संगीत का क्षेत्र भी लय के बिना अपंग है। संगीत के विषय में तो लय के बिना सोचा भी नहीं जा सकता। प्रत्येक गति में एक लय है, प्रत्येक वस्तु के उत्पन्न होते ही उसमें एक काल का सम्मिश्रण हो जाता है और जब वही काल अथवा समय बराबर चलता रहता है तो हम उसी को लय कहते हैं। इसी प्रकार स्वर की उत्पति के साथ ही उसके काल अथवा लय की भी उत्पति हो जाती है और यही लय उस स्वर को अपने बन्धन में बान्ध कर उसे परिमार्जित कर देती है। तत्पश्चात उसी समान चाल (लय) के द्वारा ही स्वर को बल एवं माधुर्य मिलता है तथा स्वर का दुगना आन्नद आने लगता है। विभिन्न लयों में बन्ध कर स्वर और भी निखरता है।

विलम्बित लय में स्वर झूलता है, मध्यलय में स्वर में स्थिरता का भास होता है तथा द्रुत लय में स्वर में थिरकन आती है। इस प्रकार हमें ज्ञात होता है कि लय का संगीत में कितना महत्व है। अब ताल के विषय में देखते है। जिस लय का उपरोक्त उल्लेख किया गया है यही ताल का आधार है। लय को ताल की जननी कहा जाता है अर्थात लय से ही ताल उत्पन्न होते है। यदि बिना ताल के लगातार केवल लय ही चलती रहे तो सम्भव है कि श्रोता ऊब जाएं, अतः लय को और सुदृढ़, परिष्कृत एवं रंजक बनाने के लिए उसे एक निश्चित चक्र में बांध देते है।

इस मापक विधि का नाम संगीतज्ञों ने 'ताल' दिया। ताल में लय का एक निश्चित क्रम होता है, उस लय को शास्त्रीय नियमों अर्थात् मात्राएं, बोल, खाली, ताली, सम, विलम्बित मध्य, द्रुत एवं विभाग के अनुसार ताल का रूप दिया जाता है। उदाहरण के लिये घड़ी की सुई की टिक-टिक लयबद्ध है। हम उसे ताल नहीं कह सकते, जब तक उस लय को शास्त्र रूप नहीं दिया जाता। अब यदि आप घड़ी की टिक-टिक के साथ दादरा के बोल बोलना शुरु कर दें तो आपको लगेगा की घड़ी दादरा ताल में चल रही है। एक टिक के साथ एक बोल बोलना है। इसी तरह यदि आप कहरवा को टिक-टिक के साथ कहेंगे तो घड़ी की चाल कहरवा वाली ही लगेगी। इसी तरह अन्य तालें भी। कहने का तात्पर्य यह है कि जब लय को निश्चित बोलों में बांधा तो इस एक तरह की लय ने अलग-अलग रूप लिए। हमें स्मरण रखना चाहिए के केवल बोलों के परिवर्तन से ही ताल एक दूसरे से भिन्न नही होते, उनके कई अन्य शास्त्रीय नियम भी होते हैं। उपरोक्त तो एक उदाहरण मात्र है।

स्वर यदि रस का सागर है तो लय उसकी मथानी है। राग यदि रंजकता का अगम पारावार है तो ताल उसका आधार यंत्र। स्वर जहां चाहे वहां नही जा सकता वह लय के बन्धन में है। उससे बन्ध कर ही उसे चलना होगा, तभी वह रस को उत्पन्न कर सकता है। यदि स्वर एक ही लय में चलता रहे तो उसमें विभिन्नता नहीं आती, लय की विभिन्नता ही स्वर में विभिन्न चाले उत्पन्न कर सकती है। स्वर को उत्पन्न करना और गति प्रदान करना, तत्पश्चात उचित समय पर विश्रांति देना ही एक मात्र कार्य है जो राग को रंजकता प्रदान करने का साधन है। परन्तु इस महान और असीमित राग को बंधन में बांधना ही एक कठिन कार्य है। इसके लिये लय, मात्रा, काल एवं एक विशेष मापदण्ड 'ताल' की आवश्यकता है। स्वर की गति एवं विश्रांति यदि नियमबद्ध होकर चलती है तो स्वर में शिथिलता नहीं आती। विश्रान्ति में आगे के स्वरों को गाने की कल्पना की उत्पति होती है और बाद में अन्य स्थानों में उसका प्राकट्य। यही नियम ताल में खाली और भरी में है। खाली के चिन्ह पर मूक आदेश होता है कि स्वर में शक्ति संचारित करें और प्रदर्शन के हेतु मार्ग आधारित करें। उदाहरण के लिए 'एक ताल' को ही ले। इसमें तीन और सात मात्रा पर खाली होती है जो कि विश्रान्ति और श्वासपूर्ति के दो स्थान है और साथ ही ताल को स्मरण रखने का मार्ग भी प्रदर्शित करते है। खाली के कारण ही राग के स्वरों और ताल पर असाधारण अधिकार सिद्ध होता है।

आधुनिक उतर भारतीय संगीत में प्रचलित तालों को मोटे तौर पर दो भागों में विभाजित किया जा सकता है, बड़ी ताले और आधी ताले। अर्ध (आधी) तालों के अतर्गत कहरवा, दादरा विशेष रूप से माने जाते है। बहुत हद तक रूपक को भी अर्द्ध ताल के अन्तर्गत मानते है। अब इन तालों का असर तो देखों। बच्चे भी कहरवें पर ताली बजाना शुरु कर देते है, बूढ़ों की कमर में भी जान आ जाती है, नौजवानों के हृदय में विशेष प्रकार की रसानुभूति होती है जिसका परमानन्द प्रत्येक व्यक्ति महसूस करता है। इस प्रकार के चलन में एक विशेष प्रकार का उल्लास होता है। इसी प्रकार रूपक ताल में भी उद्धृत प्रभाव है। जिस प्रकार विरह वेदना में नायिका की शारीरिक और मानसिक गतिविधि अनिश्चित होती है सम पर ताल को उसी प्रकार मूर्छा आ जाती है तथा एक अलग तरह का अहसास होता है।

ताल के लिये ढोल, मृदंग, पखावज़ तबला, झांझ, मंजीरा, करताल आदि कई प्रकार के वाद्य यंत्र प्रयोग किए जाते है। तबला, मृदंग तथा पखावज़ आदि का एकल (Solo) वादन भी प्रस्तुत किया जाता है, जिसे Instrumental Percussion की श्रेणी में रखा जाता है। किसी भी गीत के साथ ताल वाद्य की संगत परमावश्यक है। भले ही अन्य वाद्य की उपस्थिति संगत के रूप में हो या न हो। हर प्रकार के निबद्ध गान में चाहे वो शास्त्रीय हो, अर्धशास्त्रीय हो या सुगम संगीतादि हो, में ताल का विशिष्ट स्थान है। ताल के साथ गायन-वादन-नर्तन में नई जान आ जाती है। - ताल के बिना ये सब नीरस ही प्रतीत होगें। संगीत का प्राण ताल है और ताल का प्राण 'सम' है। गाना चाहे जिस मात्रा से आरम्भ किया जा सकता है, परन्तु 'सम' के स्थान में कोई स्वतंत्रता नहीं हो सकती। सम पर आकर मिलना ही पड़ता है। यदि इसमें दोष रहा तो वह गाने-वजाने वाला-बेताला माना जाएगा। यद्यपि यह हो सकता है कि गाने में वैचित्र्य प्रदान करने के लिये कई बार सम को छोड़ दिया जाए। सम को आप अपनी इच्छा से कई बार छोड़ सकते है, परन्तु वह आपसे 'छूटना' नहीं चाहिए। ताल पर जितनी अधिक पकड़ होगी उतना ही प्रभावशाली गायन या वादन पेश किया जा सकता है।

ताल के दस प्राण

1) काल

काल सामान्य रूप से समय का द्योतक है, जो असीम है। संगीत में यह माप के साथ प्रयुक्त किया जाता है।

2) मार्ग

मार्ग काल की सापेक्ष्यता बताता है। काल मात्रा से बोधित होता है। शास्त्रकारों ने ध्रुव, वर्तिका, दक्षिणा तथा चित्रा ये चार मार्ग बताएं है।

3) क्रिया

ताली बजाकर या निःशब्द हस्त-संचालन द्वारा ताल के विभागों का ज्ञान करना क्रिया कहलाता है।

4) अंग

ताल के विभागों को अंग कहते है। विभिन्न तालों में विभिन्न मात्राओं के विभाग होते है। कर्नाटक संगीत में मुख्य छः अंग माने गए हैं।

5) ग्रह

ग्रह सम को कहा जाता है। यह ताल की प्रथम मात्रा होती है। ग्रह के दो भेद होते है। समग्रह और विषम ग्रह। जब गीत ताल के साथ आरंभ होता है, यह समग्रह कहलाता है, अर्थात् जब गीत पहली मात्रा से प्रारम्भ हो। विषम ग्रह में ताल और गीत एक स्थान से आरम्भ नहीं होते। विषम ग्रह भी दो तरह का होता है। अतीत और अनागत। जब गीत का प्रारम्भ ताल से पूर्व हो तो वह अतीत सम कहलाता है तथा जब गीत का प्रारम्भ ताल के बाद शुरु होता है तो वह 'अनागल सम कहलाता है।

6) जाति

विभागों की मात्राओं की संख्या बदलने से जो ताल का वजन बदल जाता है, उसी से विभिन्न जातियां बनी है। दक्षिण पद्धति में लघु (=1) की मात्रा बदलने ते कुल पांच जातियां बनी है। चतुस्त्र, त्र्यस्त्र, मिश्र, खण्ड और संकीर्ण जिनमें क्रमशः लघु की मात्राएं 4, 3, 7, 5 और 9 होती है। इन्हीं पांच जातियों की सहायता ते कर्नाटक के 35 तालों की पद्धति बनी।

हिन्दुस्तानी संगीत में 'जाति' शब्द का स्पष्ट अर्थ नहीं रह गया है। साधारणतः समसंख्या की मात्राओं के विभाग वाले ताल चतुरस्त्र जाति के ताल माने जाते है। जैसे तीनताल, कहरवा आदि। त्र्यस्त्र जाति के तालों में तीन-तीन मात्राओं के

विभाग होते है। जैसे दादरा आदि। मिश्र जाति में धमार और खण्ड जाति में झप ताल कहा - है। किन्तु वास्तव में हिन्दुस्तानी संगीत में चतुस्त्र लयकारी और त्र्यस्त्र लयकारी ही प्रयुक्त होती है।

7) कला

तबला बजाने की विधि को ही कला कहते है। विभिन्न घरानों की कला अपनी एक निजि विशेषता रखती है।

8) लय

समय के किसी भी भाग की समान चाल को लय कहते है। एक मात्रा से दूसरी मात्रा कहने में जो बराबर समय लगता है उसे ही लय कहते है। मुख्यतः लय को तीन भागों में बांटा गया है। 1. विलम्बित लय 2. मध्यलय 3. द्रुत लय कुआड़ी-आड़ी-बियाड़ी

(क) कुआड़ी लय- मध्यलय से सवाई लय को कुआड़ी लय कहते है।

(ख) आड़ी लय- मध्य लय से ड्योढ़ी लय आड़ी कहलाती है।

(ग) बियाड़ी लय- मध्यलय से पौने दो गुनी लय बियाड़ी कहलाती है।

9) यति

लय अथवा गति नापने की विधि को यति कहते है।

10)प्रस्तार

तबला बजाते समय कायदा, पलटा, रेला, टुकड़े परन आदि बजाते हुए जो विस्तार किया जाता है। उसी को संगीत शास्त्र में प्रस्तार की संज्ञा दी गई है।

स्वयं मूल्यांकन प्रश्न

1.1 ताल मे अंग किसे कहते हैं?

1) ताल की मात्रा को

2) ताल के विभाग को

3) खाली को

4) ताली को

1.2 शास्त्रीय संगीत मे सवाई लय को क्या कहा जाता है?

1) दुगुण

2) बिआड़ लय

3) तिगुण लय

4) कुआड़ी लय

1.3 शास्त्रीय संगीत मे ड्योढ़ी लय को क्या कहा जाता है?

1) आड़ लय

2) बिआड़ लय

3) तिगुण लय

4) कुआड़ी लय

1.4 शास्त्रीय संगीत मे पौने दो गुण लय को क्या कहा जाता है?

1) आड़ लय

2) बिआड़ लय

3) तिगुण लय

4) कुआड़ी लय

1.5 लय अथवा गति नापने की विधि को क्या कहते है?

1) यति

2) सम

3) ताली

4) काल

1.6 तबला बजाने की विधि को कहते है?

1) रस

2) कला

3) क्रिया

4) अन्य

1.4 सारांश

अलंकार भारतीय शास्त्रीय संगीत का एक महत्वपूर्ण विषय है, जिसके बिना अच्छे संगीत की कल्पना भी नहीं की जा सकती। अलंकारों के अभ्यास से शास्त्रीय संगीत मे तैयारी और परिपक्क्वता आती है, जो श्रोताओं को अनायास ही मंत्रमुग्ध करती हैं। शास्त्रीय संगीत मे अलंकार अभ्यास से संगीतज्ञ के गायन वादन मे रंजकता और परिपक्क्वता आती है। अलंकार किसी भी राग मे या स्वरों के अनुसार ताल बद्ध तरीके से गाए एवं बजाए जा सकते हैं।

1.5 शब्दावली

- अलंकार (Alankar): जिस प्रकार एक स्त्री सुन्दर दिखने के लिए आभूषणों से खुद को सजाती है वही स्थान संगीत मे अलंकार का है।

- राग (Raga): संगीत का एक विशेष संरचनात्मक पद्धति, जो स्वरों के विशेष क्रम का उपयोग करके भावनात्मक और मनोरंजन को व्यक्त करता है।
- ताल (Taal): संगीत में अंकित समय स्तर को ताल कहा जाता है, जो गायन या वादन के साथ समय की गणना करने में मदद करता है।
- लय (Lay): संगीत में गति या चलन को लय कहा जाता है, जो ताल की गति को निर्दिष्ट करता है।
- कुआड़ लय (Kuad laya): सवा गुण की लय को कुआड़ लय कहा जाता है।
- आड़ लय (Aad laya): डेढ़ गुण की लय को आड़ लय कहा जाता है।
- बिआड़ लय (Aadlaya): पौने दो गुण की लय को बिआड़ लय कहा जाता है।
- यति (Yati): लय अथवा गति नापने की विधि को यति कहा जाता है।
- श्रुति (Shruti): संगीत में सबसे छोटे स्वर को श्रुति कहा जाता है, जो स्वर स्थान पर किसी भी विस्तार में पाया जा सकता है।
- कला (Kala): तबला बजाने की विधि को कला कहा जाता है।
- अलंकार (Alankaar): संगीत में आकर्षकता और सौंदर्य को बढ़ाने के लिए स्वरों या ताल के विशेष प्रयोग को अलंकार कहा जाता है।

1.6 स्वयं जांच अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

आत्म-मूल्यांकन प्रश्न 1

1.1 उत्तर: 2

1.2 उत्तर: 4

1.3 उत्तर: 1

1.4 उत्तर: 2

1.5 उत्तर: 1

1.6 उत्तर: 2

1.7 संदर्भ

भातखंडे, विष्णुनारायण. (1970). कर्मिक पुस्तक मलिका. खंड 1-6, संगीत कार्यालय हाथरस।

श्रीवास्तव, हरिश्चद्र. (2015). राग परिचय (भाग 1), संगीत सदन प्रकाशन, इलाहबाद।

मृत्युंजय, डॉ. शर्मा. (2000). संगीत मैनुअल. ए.जी. पब्लिकेशन, दिल्ली।

श्रीवास्तव, हरिश्चद्र. (2010). राग परिचय (भाग 4), संगीत सदन प्रकाशन, इलाहबाद।

प्रो. केशव शर्मा द्वारा साक्षात्कार से प्राप्त जानकारी।

डॉ. मृत्युंजय शर्मा द्वारा साक्षात्कार से प्राप्त जानकारी।

डॉ. निर्मल सिंह द्वारा साक्षात्कार से प्राप्त जानकारी।

1.9 अनुशंसित पठन

श्रीवास्तव, हरिश्चद्र. (2015). राग परिचय (भाग 2), संगीत सदन प्रकाशन, इलाहबाद।

श्रीवास्तव, हरिश्चद्र. (1998). मधुर स्वरलिपि संग्रह. संगीत सदन प्रकाशन, इलाहबाद।

1.9 पाठगत प्रश्न

प्रश्न 1. ताल शब्द का अर्थ एवं परिभाषा लिखिए।

प्रश्न 2. ताल शब्द का अर्थ एवं परिभाषा और ताल के प्राणों का विस्तार सहित वर्णन करें।

प्रश्न 3. ताल शब्द का अर्थ, परिभाषा एवं ताल के प्राणों मे गृह, जाति और यति का विस्तार सहित वर्णन करे।

प्रश्न 4. ताल शब्द का अर्थ, परिभाषा और यति के विभिन्न प्रकारों को विस्तार से लिखिए।

इकाई-2
गायकों के गुण तथा अवगुण और आविर्भाव तिरोभाव

इकाई की रूपरेखा

2.1	भूमिका
2.2	उद्देश्य
2.3	गायकों के गुण तथा अवगुण परिचय
	स्वयं जांच अभ्यास 1
2.4	आविर्भाव तिरोभाव परिचय
	स्वयं जांच अभ्यास 2
2.5	सारांश
2.6	शब्दावली
2.7	स्वयं जांच अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
2.8	संदर्भ
2.9	अनुशंसित पठन
2.10	पाठगत प्रश्न

2.1 भूमिका

संगीत (गायन तथा वादन) में, स्नातक के क्रियात्मक पाठ्यक्रम MUSA303 की यह दूसरी इकाई है। इस इकाई में संगीत, विशेष रूप से गायन और सितार वाद्य के संदर्भ में, गायकों के गुण तथा अवगुण एवं आविर्भाव और तिरोभाव विषय का अर्थ परिचय और विस्तृत अध्ययन किया गया है।

उत्तर भारतीय शास्त्रीय संगीत में रागों का प्रस्तुतिकरण विशेष रूप से होता है, जो सुनने में मधुरता से युक्त, कर्णप्रिय, वैचित्रतापूर्ण तथा आनंददायक होता है। आज के समय में शास्त्रीय संगीत के कलाकार रागों को अपने मंच प्रदर्शन के समय प्रस्तुत करते हैं। रागों में मधुरता और वैचित्र्य लाने के लिए अलंकारों का अभ्यास किया जाता है। अलंकारों के अभ्यास से गायक की आवाज मे परिपक्क्वता और वादक के वादन मे मधुरता और तैयारी साफ झलकती है। जितनी परिपक्क्वता गायक या वादक के गायन या वादन मे होनी चाहिए उतना ही उन्हें अपने गुण अवगुणों पर ध्यान देने की जरूरत होती है। अगर गायक या वादक अपने गुण अवगुणों को ध्यान मे रखकर कला प्रदर्शन करे तो निश्चय ही प्रस्तुति का प्रभाव श्रोताओं पर पड़ेगा।

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् विद्यार्थी गायकों के गुण तथा अवगुण एवं आविर्भाव और तिरोभाव के बारे मे विस्तार से अध्ययन कर पाएंगे तथा साथ ही गायन और सितार वादन मे विषयों को समाहित कर अपनी परस्तुति मे चार चंद लगा सकेंगे।

2.2 उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन करने के पश्चात् विद्यार्थी

- गायकों के गुण तथा अवगुण का अर्थ समझ सकेंगे।
- गायकों के गुण तथा अवगुण विषय के अंतर्गत आने वाले गुणों को विद्यार्थी अपने ययन या रवादन मे समाहित कर पाएंगे।

- गायकों के गुण तथा अवगुण विषय के अंतर्गत आने वाले अवगुण मुक्त कर अपनी प्रस्तुति को बेहतर बना सकेंगे।
- आविर्भाव और तिरोभाव का अर्थ और विस्तार सहित समझ सकेंगे।
- आविर्भाव और तिरोभाव को समझकर अपने क्रियात्मक व्यवहार मे समाहित कर सकेंगे।
- आविर्भाव और तिरोभाव विषय को समझ कर विद्यार्थी पाठ्यक्रम के अलावा भी अन्य रागों मे आविर्भाव और तिरोभाव को समझ सकेंगे।

इन उद्देश्यों के माध्यम से, विद्यार्थी न केवल गायकों के गुण तथा अवगुण और आविर्भाव और तिरोभाव के तकनीकी पहलुओं को जान पाएंगे, बल्कि इसके गहरे सांगीतिक, सांस्कृतिक और भावनात्मक महत्व को भी समझ सकेंगे। इससे उनके संगीत के प्रति दृष्टिकोण में गहराई और समृद्धि आएगी, साथ ही मंच प्रदर्शन मे परिपक्क्वता का अनुभव भी प्राप्त होगा, जो कि उनके भविष्य में सहायक सिद्ध होगा।

2.3 गायकों के गुण तथा अवगुण

हमारे प्राचीन ग्रन्थकारों ने गायकों के गुणों और अवगुणों का वर्णन भली प्रकार से किया है। अतएव गायक के लिए यह आवश्यक है कि वह गुणों को ग्रहण करे तथा अवगुणों का त्याग करें। संगीत का अभ्यास करने के साथ इन गुणों तथा अवगुणों का सदैव ध्यान रखना चाहिये, क्योंकि यदि आरम्भ से ही कुछ अवगुण रह गये तो बाद में उनको दूर करने में बड़ी कठिनाई का सामना करना पड़ता है। शारङ्गदेव के 'संगीत- रत्नाकर' नामक ग्रन्थ में इन गुणों व अवगुणों का बहुत विस्तृत वर्णन मिलता है। वैसे भी यदि लिखना चाहें तो अनेक गुग तथा अवगुण लिखे जा सकते हैं। परन्तु मुख्य-मुख्य गुण जो अच्छे गायक में होना आवश्यक है, इस प्रकार हैं :-

1) स्वरों और श्रुतियों का उत्तम ज्ञान।

2) रागों का विस्तृत तथा पूर्ण ज्ञान। एक राग को गाते समय दूसरे रागों से उसे किस प्रकार बचाना चाहिये तथा किस प्रकार राग में अन्य रागों के आविर्भाव-तिरोभाव करना चाहिये।

3) ताल और लय का उत्तम ज्ञान। गायन में ताल एवं लय को बड़ा महत्त्वपूर्ण स्थान प्राप्त है इसलिए प्रत्येक उत्तम गायक को ताल तथा विभिन्न लयों का अभ्यास होना आवश्यक है।

4) गायक को गीत के शब्दों का शुद्ध उच्चारण करना चाहिये।

5) मन्द्र, मध्य तथा तार इन तीनों सप्तकों में गाने का अभ्यास करना चाहिये।

6) राग की रंजकता को ध्यान मे रखते हुए गाना चाहिये।

7) राग का विस्तार करने के लिए गायक को तान, आलाप, बोलतान तथा अलंकारों आदि का अच्छा अभ्यास होना आवश्यक है।

8) गायक को मधुर एवं सरल स्वर में गाना चाहिए।

9) गायक को स्वाधीन तथा खुले कण्ठ से गाना चाहिये।

10) गायक को निडर होकर गाना चाहिये।

11) राग के रस का ध्यान रखते हुए गाना चाहिये। राग की परिभाषा में भी कहा गया है कि "रसात्मक रागाः" इसलिए राग में रस की अभिव्यक्ति होनी चाहिये।

12) गायक को गाने का समय तथा श्रोताओं का ध्यान रखना चाहिये अर्थात् गायक को समय का ही राग गाना चाहिये तथा यह देखना भी आवश्यक है कि श्रोता किस प्रकार का गायन पसन्द करेंगे। इसलिए श्रोताओं के पसन्द का ही गाना गाना चाहिये जिससे अधिक आनन्द आ सके।

13) गाते समय गायक के गले आदि पर मेहनत नहीं पड़नी चाहिए और न मुद्रा ही भंग होनी चाहिए। उत्तम गायक को बड़ी ही सरलता से तथा स्वाभाविकता से गाना चाहिये।

इन गुणों का समावेश जिस गायक से होगा वह निश्चय ही उत्तम गायक माना जायगा। अव गायकों के मुख्य अवगुण नीचे दिये गये हैं:-

1) बेसुरा गाना अर्थात् गाने में स्वर तथा श्रुति अपने उचित स्थान पर न लगना।

2) बेताला तथा बेलय गाना।

3) नाक की आवाज से गाना।

4) दाँतों को पीस कर गाना।

5) चिल्लाते हुए गाना।

6) डर तथा भय के साथ गाना।

7) काँपते हुए गाना अथात् गाने में आवाज का काँपना।

8) मुँह बना कर गाना तथा गाते समय गरदन टेढ़ी करना।

9) गाते समय मुद्राएँ बनाना तथा हाथ-पैर चलाना।

10) कर्कश आवाज में गाना।

11) रस का ध्यान न रख कर अर्थात नीरस गाना।

12) राग की शुद्धता का ध्यान न रखते हुए गाना।

13) लापरवाही से गाना।

14) समय तथा श्रोताओं का जान न रखते हुए गाना।

15) गीत के शब्दों का गलत उच्चारण करते हुए गाना अथवा गीत के शब्दों को इस बुरी तरह से कहना जिससे शब्द समझ में न आ सकें।

स्वयं मूल्यांकन प्रश्न

2.1 'गायक को स्वाधीन तथा खुले कण्ठ से गाना चाहिये' ये क्या है?

1) अवगुण

2) गुण

3) एक और दो

4) कोई नहीं

2.2 ‘कर्कश आवाज में गाना’ ये क्या है?

1) अवगुण

2) गुण

3) एक और दो

4) कोई नहीं

2.3 ‘चिल्लाते हुए गाना’ ये क्या है?

1) अवगुण

2) गुण

3) एक और दो

4) कोई नहीं

2.4 ‘गायक को निडर होकर गाना चाहिये’ ये क्या है?

1) अवगुण

2) गुण

3) एक और दो

4) कोई नहीं

2.5 ‘गाते समय मुद्राएँ बनाना तथा हाथ-पैर चलाना‘ये क्या है?

1) अवगुण

2) गुण

3) एक और दो

4) कोई नहीं

2.4 आविर्भाव और तिरोभाव

तिरोभाव-

राग का विस्तार करते हुए कुशल गायक कभी-कभी समप्राकृतिक रागों की छाया दिखा कर श्रोताओं के मन में विचित्रता उत्पन्न कर देते हैं और ऐसे समय में श्रोता दूसरे राग की झलक स्पष्ट सुनते हैं। इस क्रिया को राग का तिरो-भाव कहते हैं। परन्तु यह तिरोभाव बहुत कम समय में ही राग के विशेष स्वरों द्वारा नष्ट कर दिया जाता है। कभी-कभी ऐसा भी होता है कि राग-विस्तार करते हुए उसी राग के कुछ ऐसे स्वर अपने आप लग जाते हैं जिससे समप्राकृतिक रागों की छाया उत्पन्न हो जाती है। कुशल गायक शीघ्र ही राग के विशेष स्वर समुदायों द्वारा इस छाया को नष्ट करता है। तिरोभाव साधारणतः दो प्रकार से होता है :-

(1) राग में समप्रक्कृत राग अथवा उससे मिलते-जुलते स्वर लगाने वाले रागों की छाया आने पर।

(2) राग में विभिन्न स्वरों के प्रयोग से राग का रूप बदल जाने पर।

आविर्भाव-

राग-विस्तार में जब अन्य समप्राकृतिक रागों की झलक स्पष्ट हो जाती है अथवा जब उस राग के भिन्न-भिन्न स्वरों से राग का स्वरूप बदल जाता है, तब कुशल गायक शीघ्रता से राग के प्रमुख स्वरों को लगा कर फिर श्रोताओं के मन में अपने पूर्व राग का स्वरूप अंकित करता है। दूसरे शब्दों में हम कह सकते हैं कि राग के तिरोभाव पर यह आवश्यक हो जाता है कि उसको राग के प्रमुख स्वर-समुदायों द्वारा शीघ्र ही नष्ट किया जाए, जिससे श्रोताओं के मन में समप्रकृत राग का स्वरूप नष्ट हो जाए। इस तिरोभाव को नष्ट करने की क्रिया को ही आविर्भाव कहते हैं। राग-विस्तार में तिरोभाव व आविर्भाव एक साथ ही एक के बाद एक होते हैं। अर्थात् जैसे ही राग में तिरोभाव हुआ वैसे ही गायक समप्रकृत राग का स्वरूप या झलक नष्ट करने के लिए आविर्भाव करता है।

नीचे तिरोभाव व आविर्भाव के उदाहरण दिये जाते हैं :

(1) राग बिहाग में समप्राकृतिक राग का तिरोभाव तथा आविर्भाव-

बिहाग - गमग, ग म (म तीव्र) प, नि, ध, मप , गमग, ग म प निसांनि।

राग शंकरा का लोप - सां, नि प, प ग, पग, रेग रेसा।

अविर्भाव-सा तब, पधगमग, रे सा।

(2) राग भैरवी – गमधनिसां, रेंसां नि सां,ध प।

तिरोभाव- (राग मालकौंस) –ग म ग , सा ग म ग।

अविर्भाव-सा रे सा, ग म ध प म ध म ग रे सा।

दूसरे प्रकार से तिरोभाव तब होता है, जब राग के विभिन्न स्वरों से राग का स्वरूप छिप जाता है। **उदाहरणार्थ राग खमाज का तिरोभाव-आविर्भाव इस प्रकार होगा।**

राग खमाज- ग म प ध नि ध, म ग, ग म प ध नि सां।

तिरोभाव- नि प, म ग म, सा ग रे नि (मंद्र),सा ग म ।

आविर्भाव- ग म ध नि ध म ग।

स्वयं मूल्यांकन प्रश्न

2.6 प्रमुख राग प्रस्तुति के समय दूसरे राग की छाया दिखाना क्या है?

1) सरगम

2) तिरोभाव

3) तराना

4) छाया

2.7 दूसरे राग की छाया दिखने के बाद पुनः प्रमुख राग मे आना क्या कहलाता है?

1) मुर्की

2) तान

3) आविर्भाव

4) तराना

2.5 सारांश

गायकों के गुण तथा अवगुण और आविर्भाव और तिरोभाव भारतीय शास्त्रीय संगीत का एक महत्वपूर्ण विषय है, जिसके बिना अच्छे संगीत की कल्पना भी नहीं की जा सकती। इनके अध्ययन और के अभ्यास से शास्त्रीय संगीत मे तैयारी और परिपक्क्वता आती है, जो श्रोताओं को अनायास ही मंत्रमुग्ध करती हैं। शास्त्रीय संगीत मे अलंकार अभ्यास से संगीतज्ञ के गायन वादन मे रंजकता और परिपक्क्वता आती है।

2.6 शब्दावली

- छाया (Chhaya): किसी एक राग के गायन या वादन मे एकदम से दूसरे राग का आबग दिखाना।
- राग (Raga): संगीत का एक विशेष संरचनात्मक पद्धति, जो स्वरों के विशेष क्रम का उपयोग करके भावनात्मक और मनोरंजन को व्यक्त करता है।
- ताल (Taal): संगीत में अंकित समय स्तर को ताल कहा जाता है, जो गायन या वादन के साथ समय की गणना करने में मदद करता है।
- लय (Lay): संगीत में गति या चलन को लय कहा जाता है, जो ताल की गति को निर्दिष्ट करता है।
- श्रुति (Shruti): संगीत में सबसे छोटे स्वर को श्रुति कहा जाता है, जो स्वर स्थान पर किसी भी विस्तार में पाया जा सकता है।
- स्वर (Swar): संगीत में विभिन्न ऊर्जाओं को स्थान देने वाले तारों को स्वर कहा जाता है, जो संगीत के मूल भाग हैं।
- सप्तक (Saptak) सात स्वरों के क्रमानुसार समूह को सप्तक कहते हैं।
- अलंकार (Alankaar): संगीत में आकर्षकता और सौंदर्य को बढ़ाने के लिए स्वरों या ताल के विशेष प्रयोग को अलंकार कहा जाता है।

- सम्प्राकृतिक राग (Samprakrit Raag) किसी एक राग से मिलते जुलते राग।

2.7 स्वयं जांच अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

आत्म-मूल्यांकन प्रश्न 1

2.1 उत्तर: 2

2.2 उत्तर: 1

2.3 उत्तर: 1

2.4 उत्तर: 2

2.5 उत्तर: 1

आत्म-मूल्यांकन प्रश्न 2

2.6 उत्तर: 2

2.7 उत्तर: 3

2.8 संदर्भ

भातखंडे, विष्णुनारायण. (1970). कर्मिक पुस्तक मलिका. खंड 1-6, संगीत कार्यालय हाथरस।

श्रीवास्तव, हरिश्चद्र. (2015). राग परिचय (भाग 1), संगीत सदन प्रकाशन, इलाहबाद।

मृत्युंजय, डॉ. शर्मा. (2000). संगीत मैनुअल. ए.जी. पब्लिकेशन, दिल्ली।

श्रीवास्तव, हरिश्चद्र. (2010). राग परिचय (भाग 4), संगीत सदन प्रकाशन, इलाहबाद।

प्रो. केशव शर्मा द्वारा साक्षात्कार से प्राप्त जानकारी।

डॉ. मृत्युंजय शर्मा द्वारा साक्षात्कार से प्राप्त जानकारी।

डॉ. निर्मल सिंह द्वारा साक्षात्कार से प्राप्त जानकारी।

2.9 अनुशंसित पठन

श्रीवास्तव, हरिश्चद्र. (2015). राग परिचय (भाग 2), संगीत सदन प्रकाशन, इलाहबाद।

श्रीवास्तव, हरिश्चद्र. (1998). मधुर स्वरलिपि संग्रह. संगीत सदन प्रकाशन, इलाहबाद।

2.10 पाठगत प्रश्न

प्रश्न 1. गायकों के गुण अवगुणों को वूस्टर सहित लिखिए।

प्रश्न 2. गायकों के 15 गुण लिखिए।

प्रश्न 3. गायकों के 15 अवगुण लिखिए।

प्रश्न 4. आविर्भाव और तिरोभाव का अर्थ विस्तार सहित लिखिए।

प्रश्न 5. आविर्भाव और तिरोभाव का अर्थ एवं रागों मे आविर्भाव और तिरोभाव को उदाहरण सहित लिखिए।

इकाई-3
तीन ताल

इकाई की रूपरेखा

3.1	भूमिका
3.2	उद्देश्य
3.3	तीन ताल परिचय
	स्वयं जांच अभ्यास 1
3.4	दादरा ताल उदाहरण के लिए
	स्वयं जांच अभ्यास 2
3.5	सारांश
3.6	शब्दावली
3.7	स्वयं जांच अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
3.8	संदर्भ
3.9	अनुशंसित पठन
3.10	पाठगत प्रश्न

3.1 भूमिका

संगीत (गायन तथा वादन) में, स्नातक के क्रियात्मक पाठ्यक्रम MUSA303 की यह तीसरी इकाई है। इस इकाई में संगीत, विशेष रूप से गायन और सितार वाद्य के संदर्भ में, ताल का अर्थ परिचय और विस्तृत अध्ययन किया गया है।

उत्तर भारतीय शास्त्रीय संगीत में रागों का प्रस्तुतिकरण विशेष रूप से होता है, जो सुनने में मधुरता से युक्त, कर्णप्रिय, वैचित्रतापूर्ण तथा आनंददायक होता है। लेकिन राग के साथ अगर ताल न हो तो ऐसे संगीत की तो हम कल्पना भी नहीं कर सकते। आज के समय में शास्त्रीय संगीत के कलाकार रागों को अपने मंच प्रदर्शन के समय प्रस्तुत करते हैं तो उन्हें राग के साथ ताल का भी उतना ही ज्ञान होना चाहिए जितना कि राग का । गायन या वादन का अभ्यास अगर ताल के साथ किया जाए तो ताल मे पकड़ तो आती ही है, साथ ही प्रस्तुति मे भी चार चाँद लग जाते हैं।

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् विद्यार्थी ताल विषय का अर्थ परिभाषा और ताल की एकगुण, दुगुण और तीनगुण के बारे मे विस्तार से अध्ययन कर पाएंगे तथा साथ ही सितार वादन पर ताल के साथ अभ्यास से अपने वादन मे मधुरता परिपक्क्वता ला सकेंगे। विद्यार्थी इस विषय के अध्ययन के पश्चात स्वयं ताल को समझने और ताल के साथ न्याय करने में समर्थ हो सकेंगे।

3.2 उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन करने के पश्चात् विद्यार्थी

- ताल का अर्थ समझ सकेंगे।
- विभाग, सम, ताली और खाली का अर्थ समझ सकेंगे।
- तीन ताल का परिचय जान सकेंगे।
- दादरा ताल का परिचय जान सकेंगे।

- तीन ताल की एकगुण दुगुण और तीन गुण करना जान सकेंगे।
- दादरा ताल की एकगुण दुगुण और तीन गुण करना जान सकेंगे।
- तीन ताल के अभ्यास से किसी भी रचना को अच्छे से निभा सकेंगे।
- तीन ताल के अभ्यास से किसी भी रचना को अच्छे से निभा सकेंगे।

इन उद्देश्यों के माध्यम से, विद्यार्थी न केवल ताल के तकनीकी पहलुओं को जान पाएंगे, बल्कि इसके गहरे सांगीतिक, सांस्कृतिक और भावनात्मक महत्व को भी समझ सकेंगे। इससे उनके संगीत के प्रति दृष्टिकोण में गहराई और समृद्धि आएगी, साथ ही मंच प्रदर्शन मे परिपक्क्वता का अनुभव भी प्राप्त होगा, जो कि उनके भविष्य में सहायक सिद्ध होगा।

3.3 तीन ताल परिचय

ताल नाम- तीन ताल

मात्राएं- सोलह मात्राएं

वाद्य यंत्र- तबला वाद्य यंत्र का ताल

खाली- एक खाली (नौवीं मात्रा पर)

विभाग- चार-चार मात्राओं के चार मात्रा विभाग

ताली- पहली मात्रा पर सम तथा पाँचवीं और तेरहवीं मात्राओं पर क्रमशः पहली और दूसरी ताली

खास विशेषता- इस ताल का प्रयोग भारतीय शास्त्रीय संगीत मे ख्याल गायन/वादन विधा के साथ बहुतायत किया जाता है। इस ताल को सभी तालों का राजा भी कहा जाता है।

तीन ताल ठाह लय (एकगुण)

मात्राएं	1	2	3	4	5	6	7	8	9	10	11	12	13	14	15	16
बोल	धा	धिं	धिं	धा	धा	धिं	धिं	धा	धा	तिं	तिं	ता	ता	धिं	धिं	धा
चिन्ह	x				2				0				3			

तीन ताल (दुगुण)

मात्राएं	1	2	3	4	5	6	7	8	9	10	11	12	13	14	15	16
बोल	धाधि	धिंधा	धाधिं	धिंधा	धातिं	तिंता	ताधिं	धिंधा	धाधि	धिंधा	धाधिं	धिंधा	धातिं	तिंता	ताधिं	धिंधा
चिन्ह	x				2				0				3			

तीन ताल (तिगुण)

मात्राएं	1	2	3	4	5	6	7	8	9	10	11	12	13	14	15	16
बोल	धाधिं धिं	धाधा धिं	धिंधा धा	तिंतिं ता	ताधिं धिं	धाधा धिं	धिंधा धा	धिंधिं धा	धातिं तिं	ताता धिं	धिंधा धा	धिंधिं धा	धाधिं धिं	धाधा तिं	तिंता ता	धिंधि धा
चिन्ह	x				2				0				3			

तीन ताल (चौगुण)

मात्राएं	1	2	3	4	5	6	7	8	9	10	11	12	13	14	15	16
बोल	धाधिं धिंधा	धाधिं धिंधा	धिंतिं तिंता	ताधिं धिंधा	धाधिं धिंधा	धाधिं धिंधा	धिंतिं तिंता	ताधिं धिंधा	धाधिं धिंधा	धाधिं धिंधा	धिंतिं तिंता	ताधिं धिंधा	धाधिं धिंधा	धाधिं धिंधा	धिंतिं तिंता	ताधिं धिंधा
चिन्ह	x				2				0				3			

स्वयं मूल्यांकन प्रश्न

3.1 तीन ताल मे कितनी मात्राएं होती हैं?

1) 16

2) 14

3) 10

4) 12

3.2 तीन ताल मे कितने मात्रा विभाग होते हैं?

1) 5

2) 4

3) 6

4) 12

3.3 तीन ताल मे कौन सी मात्रा पर सम है ?

1) 5

2) 8

3) 1

4) 12

3.4 तीन ताल मे सम को मिलाकर कितनी ताली होती हैं?

1) 5

2) 3

3) 5

4) 12

3.5 तीन ताल मे कितनी खाली होती हैं?

1) 5

2) 1

3) 5

4) 2

3.4 ताल दादरा परिचय

ताल नाम- दादरा ताल

मात्राएं- छः मात्राएं

वाद्य यंत्र- तबला वाद्य यंत्र का ताल

खाली- एक खाली (चौथी मात्रा पर)

विभाग- तीन-तीनमात्राओं के दो मात्रा विभाग

ताली- पहली मात्रा पर सम

खास विशेषता- इस ताल का प्रयोग गीत , गजल, भजन और लोक संगीत मे बहुतायत किया जाता है।

ताल दादरा ठाह लय (एकगुण)

मात्राएं	1	2	3	4	5	6
बोल	धा	धिं	ना	धा	ति	ना
चिन्ह	x			0		

ताल दादरा (दुगुण)

मात्राएं	1	2	3	4	5	6
बोल	धाधि	नाधा	तिना	धाधि	नाधा	तिना
चिन्ह	x			0		

ताल दादरा (तिगुण)

मात्राएं	1	2	3	4	5	6
बोल	धाधिना	धातिना	धाधिना	धातिना	धाधिना	धातिना
चिन्ह	x			0		

ताल दादरा (चौगुण)

मात्राएं	1	2	3	4	5	6
बोल	धाधिनाधा	तिनाधाधि	नाधातिना	धाधिनाधा	तिनाधाधि	नाधातिना
चिन्ह	x			0		

स्वयं मूल्यांकन प्रश्न

3.1 दादरा ताल मे कितनी मात्राएं होती हैं?

1) 3

2) 5

3) 6

4) कोई नहीं

3.2 दादरा ताल मे कितने मात्रा विभाग हैं?

1) 2

2) 5

3) 6

4) कोई नहीं

3.3 दादरा ताल सम के अलावा कितनी ताली हैं?

1) 2

2) 1

3) 6

4) कोई नहीं

3.4 दादरा ताल मे कितनी खाली हैं?

1) 2

2) 8

3) 6

4) 1

3.5 धा धी ना, धा ति ना किस ताल के बोल हैं ?

1) झपताल

2) एकताल

3) चौताल

4) दादरा

3.5 सारांश

ताल भारतीय शास्त्रीय संगीत का एक महत्वपूर्ण विषय है, जिसके बिना अच्छे संगीत की कल्पना भी नहीं की जा सकती। ताल के अभ्यास से शास्त्रीय संगीत मे तैयारी और परिपक्क्वता आती है, जो श्रोताओं को अनायास ही मंत्रमुग्ध करती हैं। शास्त्रीय संगीत मे ताल अभ्यास से संगीतज्ञ के गायन वादन मे रंजकता और परिपक्क्वता आती है। ताल मे पकड़ के साथ किसी भी मात्रा से तान या बंदिश उठाकर सम पर विचित्रता पैदा करते हुए आया जाता है।

3.6 शब्दावली

- ताल (Taal): संगीत में अंकित समय स्तर को ताल कहा जाता है, जो गायन या वादन के साथ समय की गणना करने में मदद करता है।
- लय (Lay): संगीत के समान गति को लय कहते हैं, संगीत में लय अत्यंत महत्पूर्ण हैं, लय के बिना संगीत की कल्पना भी करना असंभव हैं।
- मात्रा (Matra): ताल की इकाई को मात्रा कहते हैं।

- ताली (Taali): सम के अलावा अन्य विभागों की पहली मात्रा पर जहाँ हथेली पर दुसरे हाथ की हथेली के आघात द्वारा ध्वनि उत्पन्न की जाती है, उसे ताली कहते हैं।
- खाली (Khali): ताल देते समय जहाँ विभाग की प्रथम मात्र पर ध्वनि न करके केवल हाथ हिलाकर इशारा कर देते हैं, उसे 'खाली' कहते हैं. अधिकतर खाली ताल के बीच की मात्र अथवा उसके आस पास हीं कहीं पड़ती है।
- विभाग (Vibhag): ताल को कुछ निश्चित मात्राओं में बांटना जिससे भरे एवं खाली जगहों का पता लगे उसे विभाग कहते हैं

3.7 स्वयं जांच अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

3.1 उत्तर: 1

3.2 उत्तर: 2

3.3 उत्तर: 3

3.4 उत्तर: 2

3.5 उत्तर: 2

आत्म-मूल्यांकन प्रश्न 2

3.8 संदर्भ

भातखंडे, विष्णुनारायण. (1970). कर्मिक पुस्तक मलिका. खंड 1-6, संगीत कार्यालय हाथरस।

श्रीवास्तव, हरिश्चद्र. (2015). राग परिचय (भाग 1), संगीत सदन प्रकाशन, इलाहबाद।

मृत्युंजय, डॉ. शर्मा. (2002). संगीत मैनुअल. ए.जी. पब्लिकेशन, दिल्ली।

श्रीवास्तव, हरिश्चद्र. (2010). राग परिचय (भाग 4), संगीत सदन प्रकाशन, इलाहबाद।

प्रो. केशव शर्मा द्वारा साक्षात्कार से प्राप्त जानकारी।

डॉ. मृत्युंजय शर्मा द्वारा साक्षात्कार से प्राप्त जानकारी।

डॉ. निर्मल सिंह द्वारा साक्षात्कार से प्राप्त जानकारी।

3.9 अनुशंसित पठन

श्रीवास्तव, हरिश्चद्र. (2015). राग परिचय (भाग 2), संगीत सदन प्रकाशन, इलाहबाद।

श्रीवास्तव, हरिश्चद्र. (1998). मधुर स्वरलिपि संग्रह. संगीत सदन प्रकाशन, इलाहबाद।

3.10 पाठगत प्रश्न

प्रश्न 1. तीनताल का परिचय एवं एकगुण लिखिए।

प्रश्न 2. दादरा ताल का परिचय एवं एकगुण लिखिए।

प्रश्न 3 तीनताल और दादरा ताल का परिचय एवं एकगुण लिखिए।

प्रश्न 4. तीनताल का परिचय एवं एकगुण और दुगुण लिखिए।

प्रश्न 5. दादरा ताल का परिचय एवं एकगुण और दुगुण लिखिए।

प्रश्न 6. तीनताल और दादरा ताल का परिचय एवं एकगुण और दुगुण लिखिए।

प्रश्न 7. तीनताल और दादरा ताल का परिचय एवं तीन ताल की एकगुण और दुगुण लिखिए।

प्रश्न 8. तीनताल और दादरा ताल का परिचय एवं दादरा ताल की एकगुण और दुगुण लिखिए।

प्रश्न 9. तीनताल और दादरा ताल का परिचय एवं तीन ताल की एकगुण और तिगुण लिखिए।

प्रश्न 10. तीनताल और दादरा ताल का परिचय एवं दादरा ताल की एकगुण और तिगुण लिखिए।

इकाई-4
रागों का समय सिद्धांत

इकाई की रूपरेखा

4.1	भूमिका
4.2	उद्देश्य
4.3	रागों का समय सिद्धांत परिचय
	स्वयं जांच अभ्यास 1
4.4	सारांश
4.5	शब्दावली
4.6	स्वयं जांच अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
4.7	संदर्भ
4.8	अनुशंसित पठन
4.9	पाठगत प्रश्न

4.1 भूमिका

संगीत (गायन तथा वादन) में, स्नातक के क्रियात्मक पाठ्यक्रम MUSA203 की यह चौथी इकाई है। इस इकाई में संगीत, विशेष रूप से गायन और सितार वाद्य के संदर्भ में, रागों का समय सिद्धांत का अर्थ परिचय और विस्तृत अध्ययन किया गया है।

उत्तर भारतीय शास्त्रीय संगीत में रागों का प्रस्तुतिकरण विशेष रूप से होता है, जो सुनने में मधुरता से युक्त, कर्णप्रिय, वैचित्रतापूर्ण तथा आनंददायक होता है। आज के समय में शास्त्रीय संगीत के कलाकार रागों को अपने मंच प्रदर्शन के समय प्रस्तुत करते हैं। रागों को गाने बजाने का एक निश्चित समय निर्धारित है। अगर किसी भी राग को उस निर्धारित समय पर प्रस्तुत किया जाए तो उस राग की मिठास और सुंदरता की ज्यादा अनुभूति होती है। इसलिए इस विषय के अध्ययन से विद्यार्थी को इन विधाओं का गहरा अनुभव हो पाएगा और वो इन्हें समझ कर अपने संगीत जीवन मे आत्मसात कर पाएगा।

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् विद्यार्थी रागों का समय सिद्धांत विषय का अर्थ परिभाषा और इन के प्रकार और रूपों के बारे मे विस्तार से अध्ययन कर पाएंगे तथा साथ ही सितार वादन पर जोड़ के अभ्यास से अपने वादन मे मधुरता ला सकेंगे। आश्रय राग के अध्ययन से विद्यार्थी रागों के बीच के अंतर को समझ पाएगा।

4.2 उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन करने के पश्चात् विद्यार्थी

- रागों का समय सिद्धांत का अर्थ समझ सकेंगे।
- परमेल प्रकाशक रागों का अर्थ समझ पाएंगे।
- संधि प्रकाश राग का अर्थ समझ पाएंगे।
- ऋतु रागों का अर्थ समझ पाएंगे।

इन उद्देश्यों के माध्यम से, विद्यार्थी न केवल रागों का समय सिद्धांत के तकनीकी पहलुओं को जान पाएंगे, बल्कि इसके गहरे सांगीतिक, सांस्कृतिक और भावनात्मक महत्व को भी समझ सकेंगे। इससे उनके संगीत के प्रति दृष्टिकोण में गहराई

और समृद्धि आएगी, साथ ही मंच प्रदर्शन मे परिपक्क्वता का अनुभव भी प्राप्त होगा, जो कि उनके भविष्य में सहायक सिद्ध होगा।

4.3 रागों का समय सिद्धांत परिचय

भारतीय संगीत जितना पुराना है, उतना इसका क्षेत्र विशाल है। आज संगीत का प्रत्येक विषय के साथ सम्बन्ध है, भले ही वह गणित, समाज शास्त्र, राजनीती, इतिहास या विज्ञान हो। प्रत्येक विषय का एक दूसरे के साथ किसी न किसी रूप में सम्बन्ध है। आदि काल से संगीत ऋतुओं जैसे ग्रीष्म, शरद, बसंत, वर्षा तथा दिन और रात के समय से जुड़ा हुआ है। यहाँ तक की ग्रह, नक्षत्र और मनोविज्ञान के आधार पर भी रागों के अलग-अलग समय निश्चित किए गए हैं। वैसे तो राग जब भी चाहें गा सकते हैं लेकिन निश्चित समय पर गाने से असीम आनन्द की प्राप्ति होती है। प्राचीन समय में रागों के समय सिद्धांत के विषय में अनेकों कहानियों व दन्त कथाएँ प्रचलित रही हैं। इसके साथ ही गुरु ग्रन्थ साहिब में राग-रागनियों को समयानुसार अंकित किया गया है।

नारद ऋषि वाली कथा प्रत्येक पुस्तक में अंकित मिलती है कि राग रागनियों के अंग भंग देख कर भगवान श्री कृष्ण ने पूछा कि आप कौन हैं? तब उन्होंने उत्तर दिया कि ऋषि नारद हमें बे-समय गाता है, हम नींद में इधर-उधर गिर जाते हैं और हमारे अंग-भंग हो चुके हैं। इसलिए ऋषि को कहा जाए कि यह हमें उचित समय पर ही याद करे। तब भगवान श्री कृष्ण ने नारद को समझाया कि वह ऐसा न करे। नए शोधों में यह कहा गया है कि रागों के समय की बात केवल भ्रम ही है। जो भी हो लेकिन आज हमारे संगीत में रागों को समय के अनुसार गाने का विधान है। हमारे हिन्दुस्तानी संगीत में रागों के समय निश्चित किए गए हैं और कहा जाता है कि यदि रागों को उनके समय अनुसार गाया-बजाया जाए तो उस राग के गाय भी अधिक आनन्द की प्राप्ति होती है और राग समयानुसार गाने-बजाने से और अधिक खिलता है।

हिन्दुस्तानी संगीत पद्धति में जिस प्रकार अन्य नियमों एवं सिद्धान्तों का पालन किया जाता है उसी प्रकार रागों के गायन अथवा वादन के समय को निर्धारित किया गया है तथा उसका पालन किया जाता है। समय संगीत शास्त्र के अनुसार रागों के गायन अथवा वादन के समय को उनके कोमल तीव्र स्वरों के आधार पर निर्धारित किया गया है।

सप्तक को दो भागों में बाँटा गया है। पूर्व भाग तथा उत्तर भाग। सप्तक के सात शुद्ध स्वरों में तार सप्तक का 'सा' मिलाकर 'सारेगम तथा पधनिसां इस प्रकार स्वरों की संख्या आठ कर ली जाए और फिर इसके दो हिस्से कर दिए जाएं तो 'सा रे ग म', यह सप्तक का पूर्वांग और प ध नि सां,' यह सप्तक का उत्तरांग कहा जाएगा। कहने का तात्पर्य यह है कि प्रथम भाग को पूर्वांग तथा द्वितीय भाग को उत्तरांग कहा जाता है। जिनके आधार पर वादी-सम्वादी निर्धारित किए जाते हैं तथा वादी-सम्वादी के आधार पर रागों का गायन समय जाना जाता है। वादी-सम्वादी कभी भी एक भाग के नही होते। उनमें चार अथवा पाँच स्वरों का अन्तर होता है।

स्वरों के आधार पर रागों के भाग

स्वरों के आधार पर रागों को दो भागों में बाँटा गया है -

1 पूर्वांगवादी राग

यदि राग का वादी स्वर सप्तक के पूर्वांग अर्थात् 'सा रे ग म इन स्वरों में से होता है तो उन्हें पूर्वांगवादी राग कहा जाता गाए-बजाएं जाते हैं। है। ऐसे राग प्रायः दिन के पूर्व भाग अर्थात् 12 बजे दिन से रात्री के 12 बजे तक 2 तक गाए बजाए जाते हैं।

2 उतरांगवादी राग

यदि राग का वादी स्वर उत्तरांग अर्थात् प ध नि सां,' इन स्वरों में से होता है तो उन्हें उत्तरांगवादी राग कहा जाता है। ऐसे राग प्रायः दिन के उत्तर भाग अर्थात् रात्री 12 बजे से दिन के 12 बजे तक ही गाए-बजाए जाते हैं।

उपरोक्त वर्णन से यह स्पष्ट हो जाता है कि राग के यादी स्वर को जान लेने पर उस राग के गायन-वादन समय का ज्ञान हो जाता है। जैसे राग आसावरी का वादी स्वर धैवत है, अर्थात् यह सप्तक का उत्तरांग स्वर है, तो इसके गायन-वादन का समय भी प्रातःकाल है अर्थात् रात्री के 12 बजे से दिन के 12 बजे तक का जो समय है उसी के अन्तर्गत् प्रातःकाल आ जाता है। इसी प्रकार राग यमन का वादी स्वर गान्धार है, जो कि सप्तक के पूर्वांग का स्वर है अतः यमन राग के गायन-वादन का समय रात्री का प्रथम प्रहर माना जाता है, जो कि दिन के 12 बजे से रात्री के 12 बजे तक के क्षेत्र में आता है इसलिए राग यमन को पूर्वांगवादी राग कह कर पुकारा जाता है तथा राग आसावरी को उत्तरांग वादी राग कहा जाता है।

उपरोक्त विवरण के पश्चात्प्रश्न यह उठता है कि राग भैरवी में वादी स्वर मध्यम है जो कि सप्तक के पूर्वांग का स्वर है, फिर भी क्या कारण है कि राग भैरवी का गायन-वादन समय प्रातःकाल माना जाता है जबकि भैरवी का गायन-वादन समय दिन का उत्तर भाग अर्थात् 12 बजे दिन से 12 बजे रात्री तक होना चाहिए। जबकि प्रातःकाल तो उत्तर भाग के अन्तर्गत् आता है फिर भैरवी का वादी स्वर, सप्तक के पूर्वांग का क्यूँ है ? इसी प्रकार यह भी शंका रहती है कि राग कामोद में पंचम स्वर वादी है, जोकि सप्तक के उत्तरांग का स्वर है, फिर इसे क्यों पूर्व भाग अर्थात् रात्री के प्रथम प्रहर में गाते-बजाते हैं। इन शंकाओं का समाधान यह है कि उत्तर भारतीय संगीत पद्धति में यद्यपि 'सा रे ग म' को सप्तक का पूर्वांग तथा प ध नि सां को उत्तरांग कहा गया है, किन्तु कुछ पूर्वागवादी तथा उत्तरांगवादी स्वरों को उपरेक्त वर्गीकरण में लाने के लिए पूर्वांग का क्षेत्र'सारेगमप' और उत्तरांग का क्षेत्र' म प ध नि सां' इस प्रकार बढ़ा कर माना गया है। इस प्रकार सप्तक के दो भाग करने से सा, म, प, ये तीनों स्वर सप्तक के पूर्वांग तथा उत्तरांग दोनों भागों में आ जाते हैं। जब इन तीनों स्वरों में से कोई स्वर वादी होता है तो वाह राग पूर्वागवादी भी हो सकता है और उत्तरांगवादी भी। अतः भैरवी और कामोद जैसे राग इसी श्रेणी में आते हैं और कामोद में पंचम वादी होते हुए भी उसे पूर्वागवादी राग कह सकते हैं। क्योंकि ये दोनों ही राग सप्तक के बढ़ाए हुए क्षेत्र में आ जाते हैं। इस प्रकार अन्य कुछ राग भी इस श्रेणी में आकर अपना क्षेत्र बना लेते हैं।

उत्तर भारतीय संगीत पद्धति में रागों के गायन-वादन के बारे में समय सिद्धान्त (ज्पउम जीमवतल) प्राचीनकाल से चला आ रहा है। यद्यपि प्राचीन तथा आधुनिक रागों में समय सिद्धान्त पर कुछ मतभेद है, जिनका कारण रागों के स्वरों में उलट-फेर हो जाना है, तथापि यह तो स्वीकार करना ही पड़ेगा कि हमारे प्राचीन संगीत पंडितों ने रागों को उनके ठीक समय पर गाने-बजाने का सिद्धान्त अपने ग्रन्थों में स्वीकार किया है। उसी को आज के संगीतज्ञ भी स्वीकार करके अपने रागों में समय सिद्धान्त का पालन कर रहे हैं।

रागों के समय विभाजन के लिए तीन मुख्य वर्ग :-

रागों के समय विभाजन के लिए तीन मुख्य वर्गों का नियम रखा गया है तथा समस्त पूर्वागवादी तथा उत्तरांगवादी राग इन तीन वर्गों के अन्तर्गत माने गए हैं। ये तीन वर्ग इस प्रकार हैं-

क). प्रथम वर्ग (रे ध कोमल स्वर वाले राग)

ख). द्वितीय वर्ग (रे ध शुद्ध स्वर वाले राग)

ग) तृतीय वर्ग (ग नि कोमल स्वर वाले राग)

इसके अतिरिक्त दो वर्ग और माने हैं:-

च) परमेल प्रवेशक राग

छ) ऋतु राग

क). प्रथम वर्ग (रे ध कोमल स्वर वाले राग)

जिन रागों में ' रेध' स्वर कोमल लगते हैं उन रागों को प्रातःकालीन तथा सांयकालीन समय में रखा गया है। इन रागों को संधिप्रकाश राग भी कहा जाता है अर्थात् दिन और रात दो समय की संधियों में इन रागों का समय निर्धारित किया गया है। दिन और रात की संधि अर्थात् मेल होने के समय को संधिकाल कहते हैं। प्रातः सूर्य उदय से पहले और शाम को सूर्यास्त से कुछ पहले का समय ऐसा होता है, जिसे न तो दिन ही कह सकते हैं और न रात ही। इसी समय को संधिप्रकाश की बेला कहा जाता है। इस बेला में जो राग गाए-बजाए जाते हैं, उन्हें ही 'संधिप्रकाश राग' कहते हैं। जैसे भैरव, कालिंगड़ा, भैरवी, पूर्वी, मारवा इत्यादि। संधि प्रकाश के भी दो भाग माने गए हैं-

अ). प्रातःकालीन संधिप्रकाश राग

जो राग सूर्योदय के समय गाए-बजाए जाएं वे प्रातःकालीन संधिप्रकाश राग' कहलाते हैं।

आ) सांयकालीन संधिप्रकाश राग

जो राग सूर्यास्त के समय गाए-बजाए जाएं उन्हें 'सांयकालीन संधिप्रकाश राग' कहा जाता है।

कौन से राग प्रातःकालीन संधिप्रकाश राग हैं और कौन से सांयकालीन संधिप्रकाश राग है यह जानना भी ज़रूरी है। इसका ज्ञान करने के लिए मध्यम स्वर का बड़ा महत्व माना जाता है। जिन रागों में शुद्ध मध्यम प्रयोग होता है, उन्हें प्रातःकालीन संधिप्रकाश राग कहा जाता है जैसे भैरव और कालिंगड़ा आदि राग प्रातकालीन संधिप्रकाश राग माने जाते हैं तथा जिन रागों में मध्यम स्वर तीव्र प्रयोग होता है, उन्हें सांयकालीन संधिप्रकाश राग कहा गया है जैसे - पूर्वी, मारवा आदि राग सांयकालीन संधिप्रकाश राग माने जाते हैं।

इसी कारण मध्यम स्वर को अत्यन्त महत्वपूर्ण स्वर माना जाता है। इसे 'अध्यदर्शक स्वर' कह कर भी पुकारा जाता है। क्योंकि मध्यम के शुद्ध तथा विकृत दोनों ही रूप राग के दिन और रात्री के समय को निर्धारित करते हैं।

ख). द्वितीय वर्ग (रे ध शुद्ध स्वर वाले राग)

जिन रागों में ' रे ध' शुद्ध लगता है, उनका गायन-वादन समय दिन तथा रात्री का प्रथम प्रहर माना जाता है। दूसरे शब्दों में हम यह भी कह सकते हैं कि रे ध शुद्ध लगने वाले रागों के गाने-बजाने का समय संधिप्रकाश-काल के बाद आता है क्योंकि संधिप्रकाश-काल दिन में दो बार आता है, अतः इस वर्ग के रागों के गाने-बजाने का समय भी चौबिस घण्टों में दो बार आता है। इस वर्ग में कल्याण, बिलावल तथा खमाज बाट के राग गाए-बजाए जाते हैं।

प्रातःकालीन संधिप्रकाश रागों के बाद गाए-बजाए जाने वाले रागों में दिन चढ़ने के साथ-साथ ही शुद्ध रिषभ तथा शुद्ध धैवत की प्रधानता बढ़ती जाती है। इस प्रकार प्रातः सात बजे से दस बजे तक और शाम को सात बजे से दस बजे तक दूसरे वर्ग के अर्थात् 'रे घ शुद्ध स्वर वाले राग गाए-बजाए जाते हैं। इस वर्ग में गान्धार' का शुद्ध होना आवश्यक है। साथ ही इस वर्ग में भी मध्यम स्वर का महत्व रहता है। जैसे प्रातः सात बजे से दस बजे तक गाए-बजाए जाने वाले रागों में शुद्ध मध्यम की प्रधानता रहती है जैसे- बिलावल, देशकार इत्यादि राग और शाम के सात बजे से दस बजे तक गाए-बजाए जाने वाले रागों में तीव्र नध्यन की प्रधानता रहती है जैसे कल्याण, मारूबिहाग, श्यामकल्याण खमाज इत्यादि राग।

ग). नि कोमल स्वर वाले राग)

'रे ध' शुद्ध स्वर लगने वाले रागों के बाद 'ग नि कोमल स्वर लगने वाले रागों का वर्ग आता है अर्थात् कोमल 'ग नि स्वर वाले राग दिन में दस बजे से सांय चार बजे तक और रात्री में दस बजे से सुबह के चार बजे तक गाए-बजाए जाते हैं। इस वर्ग के रागों का समय दिन के प्रथम प्रहर के बाद माना जाता है। दिन के द्वितीय प्रहर के बाद भी इन रागों का समय आता है। दिन के प्रथम प्रहर में आसावरी थाट के रागों का समय निर्धारित किया गया है और दिन के द्वितीय प्रहर के बाद काफी थाट के राग गाए-बजाए जाते हैं। इस वर्ग के रागों की विशेष पहचान यह है कि इनमें कोमल गान्धार अवश्य

होगा, चाहे रे ध शुद्ध हों या कोमल। इत वर्ग के रागों में प्रातःकाल आसावरी, जौनपूरी, गान्धारी तोड़ी इत्यादि राग तथा रात्री में यमन इत्यादि गाने-बजाने के बाद जैसे-जैसे आधी रात्री का समय आता जाता है तब बागेश्री, जयजयवन्ती, मालकौंस इत्यादि राग गाए-बजाए जाते हैं।

न तीन मुख्य वर्गों के आधार पर समस्त रागों के समय पूर्णतया निर्धारित नही हैं। आजकल कुछ राग ऐसे भी प्रचार में हैं जिनमें केवल एक ही स्वर कोमल होता है। जैसे पटदीप, मधुबन्ती इत्यादि। कुछ राग एसे भी हैं जिनमें दोनों मध्यम समान रूप से प्रयोग होते हैं। इनमें से कुछ राग दिन के प्रथम प्रहर में तथा कुछ रात्री के प्रथम प्रहर में माने गए हैं। जैसे यमनी बिलावल, केदार, कामोद इत्यादि। कुछ राग ऐसे भी हैं जिनमें रे ध कोमल के साथ 'नि भी कोमल प्रयोग होती है जैसे दिन में आसावरी, देसी आदि तथा रात्री में कानड़ा के प्रकार गाए जाते हैं।

रागों के समय सिद्धान्त के अन्य दो वर्ग इस प्रकार हैं:-

च) परमेल प्रवेशक राग

परमेल' का अर्थ है, दूसरा कोई मेल और प्रवेशक अर्थात् प्रवेश करने वाला अर्थात् जैसा कि नाम से ही प्रतीत होता है कि जो राग एक मेल से दूसरे मेल अथवा थाट में प्रवेश करता है, उन्हें परमेल प्रवेशक' राग कहा जाता है। ये राग ऐसे समय में गाए-बजाए जाते हैं जब इनके थाट का समय समाप्त होने का होता है और दूसरे थाट में प्रवेश कराते हैं, अर्थात् दूसरे थाट के रागों का समय शुरू होने का होता है। इन रागों की दूसरी विशेषता यह है कि इनमें दोनों वर्गों के स्वर स्पष्ट होते हैं। जैसे कि सांयकालीन संधिप्रकाश राग के पहले तथा गनि कोमल के बाद मुलतानी परमेल प्रवेशक राग गाया जाता है। इसके अतिरिक्त राग जयजयवन्ती और राग मालगूंजी भी परमेल प्रवेशक राग ही माने जाते हैं। ये रे ध शुद्ध तथा 'ग नि कोमल वाले रागों में प्रवेश कराते हैं।

छ) ऋतु राग:-

उपरोक्त तीन वर्गों के अतिरिक्त कुछ राग ऐसे भी हैं जिन्हें इन वर्गों पर ध्यान न देकर ऋतु के अनुसार किसी भी समय गाया-बजाया जाता है जैसे मल्हार, बसन्त, बहार, काफी आदि अंग के राग। ये राग ऋतु समय के अनुसार गाए जाते हैं जैसे वर्षा ऋतु में मल्हार तथा बसन्त ऋतु में बसंत बहार आदि राग गाए जाते हैं।

इसके अतिरिक्त कुछ ऐसे राग भी होते हैं जिन्हें सर्वकालीन राग कहा जाता है जैसे भैरवी, खमाज इत्यादि।

सारांश

आदि काल से संगीत ऋतुओं जैसे ग्रीष्म, शरद, बसंत, वर्षा तथा दिन और रात के समय से जुड़ा हुआ है। वैसे तो राग जब भी चाहें गा सकते हैं लेकिन निश्चित समय पर गाने से असीम आनन्द की प्राप्ति होती है। रागों के समय सिद्धान्त के विषय में संगीतज्ञों के अलग-अलग विचार हैं। कुछ लोग इसका अनुसरण करते हैं और कुछ नही मानते। सही समय पर रागों का गायन करने से श्रोताओं पर भी उसका अच्छा प्रभाव पड़ता है। और राग की रसोत्पत्ति भी सम्भव होती है। लेकिन कुछ का मानना है कि यदि समयानुसार राग का गायन न किया जाए तो भी रसोत्पत्ति सम्भव होती है और श्रोताओं को आकर्षित भी किया जा सकता है। जो भी हो रागों का समय सिद्धान्त आज भी हमारी संगीत पद्धति में अपना एक अलग स्थान रखता है।

स्वयं मूल्यांकन प्रश्न

4.1 सा रे ग म कौन स अंग हैं?

1) पूर्वांग

2) उत्तरांग

3) रागांग

4) कोई नहीं

4.2 प ध नि सां कौन स अंग हैं?

1) पूर्वांग

2) उत्तरांग

3) रागांग

4) कोई नहीं

4.3 जो राग ऋतुओ के अनुसार गाए बजाए जाए, क्या कहलाते हैं?

1) संधि प्रकाश राग

2) ऋतु राग

3) शुद्ध राग

4) कोई नहीं

4.4 जो राग सूर्योदय के समय गाए-बजाए जाएं वे ....कहलाते हैं।

1) सायं कालीन संधिप्रकाश राग

2) रात्रि कालीन संधिप्रकाश राग'

3) प्रातःकालीन संधिप्रकाश राग

4) कोई नहीं

4.5 जो राग सूर्यास्त के समय गाए-बजाए जाएं वे ....कहलाते हैं।

1) सायं कालीन संधिप्रकाश राग'

2) रात्रि कालीन संधिप्रकाश राग'

3) प्रातःकालीन संधिप्रकाश राग

4) कोई नहीं

4.4 सारांश

रागों का समय सिद्धांत विषय भारतीय शास्त्रीय संगीत का एक महत्वपूर्ण विषय है, जिसके बिना अच्छे संगीत की कल्पना भी नहीं की जा सकती। इनके अभ्यास से शास्त्रीय संगीत मे तैयारी और परिपक्क्वता आती है, जो श्रोताओं को अनायास ही मंत्रमुग्ध करती हैं।

4.5 शब्दावली

- राग (Raga): संगीत का एक विशेष संरचनात्मक पद्धति, जो स्वरों के विशेष क्रम का उपयोग करके भावनात्मक और मनोरंजन को व्यक्त करता है।
- ताल (Taal): संगीत में अंकित समय स्तर को ताल कहा जाता है, जो गायन या वादन के साथ समय की गणना करने में मदद करता है।

- लय (Lay): संगीत में गति या चलन को लय कहा जाता है, जो ताल की गति को निर्दिष्ट करता है।
- रागिनी (Ragini): रागों की सहायक संगीत पद्धति जिसमें संगीत रागों के विभिन्न अनुभवों और भावों को व्यक्त करने के लिए मेलोडी और ताल का उपयोग किया जाता है।
- श्रुति (Shruti): संगीत में सबसे छोटे स्वर को श्रुति कहा जाता है, जो स्वर स्थान पर किसी भी विस्तार में पाया जा सकता है।
- स्वर (Swar): संगीत में विभिन्न ऊर्जाओं को स्थान देने वाले तारों को स्वर कहा जाता है, जो संगीत के मूल भाग हैं।
- मेलोडी (Melody): संगीत में स्वरों के विशेष क्रम का एक संरचित और आकर्षक संयोजन, जिससे एक गाना या संगीत कविता का निर्माण होता है।
- अलंकार (Alankaar): संगीत में आकर्षकता और सौंदर्य को बढ़ाने के लिए स्वरों या ताल के विशेष प्रयोग को अलंकार कहा जाता है।

4.6 स्वयं जांच अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

आत्म-मूल्यांकन प्रश्न 1

4.1) उत्तर: 1

4.2) उत्तर: 2

4.3) उत्तर: 2

4.4) उत्तर: 3

4.5) उत्तर: 1

4.7 संदर्भ

भातखंडे, विष्णुनारायण. (1970). कर्मिक पुस्तक मलिका. खंड 1-6, संगीत कार्यालय हाथरस।

श्रीवास्तव, हरिश्चद्र. (2015). राग परिचय (भाग 1), संगीत सदन प्रकाशन, इलाहबाद।

मृत्युंजय, डॉ. शर्मा. (2000). संगीत मैनुअल. ए.जी. पब्लिकेशन, दिल्ली।

श्रीवास्तव, हरिश्चद्र. (2010). राग परिचय (भाग 4), संगीत सदन प्रकाशन, इलाहबाद।

प्रो. केशव शर्मा द्वारा साक्षात्कार से प्राप्त जानकारी।

डॉ. मृत्युंजय शर्मा द्वारा साक्षात्कार से प्राप्त जानकारी।

डॉ. निर्मल सिंह द्वारा साक्षात्कार से प्राप्त जानकारी।

4.8 अनुशंसित पठन

श्रीवास्तव, हरिश्चद्र. (2015). राग परिचय (भाग 2), संगीत सदन प्रकाशन, इलाहबाद।

श्रीवास्तव, हरिश्चद्र. (1998). मधुर स्वरलिपि संग्रह. संगीत सदन प्रकाशन, इलाहबाद।

4.9 पाठगत प्रश्न

प्रश्न 1. रागों के समय सिद्धांत पर व्यस्तर से प्रकाश डालें।

इकाई-5
सितार और तानपूरा

इकाई की रूपरेखा

5.1	भूमिका
5.2	उद्देश्य
5.3	सितार परिचय
	स्वयं जांच अभ्यास 1
5.4	तानपूरा परिचय
	स्वयं जांच अभ्यास 2
5.5	सारांश
5.6	शब्दावली
5.7	स्वयं जांच अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
5.8	संदर्भ
5.9	अनुशंसित पठन
5.10	पाठगत प्रश्न

5.1 भूमिका

संगीत (गायन तथा वादन) में, स्नातक के क्रियात्मक पाठ्यक्रम MUSA303 की यह पाँचवीं इकाई है। इस इकाई में संगीत, विशेष रूप से गायन और सितार वाद्य के संदर्भ में, सितार और तानपूरा का अर्थ परिचय और विस्तृत अध्ययन किया गया है।

उत्तर भारतीय शास्त्रीय संगीत में रागों का प्रस्तुतिकरण विशेष रूप से होता है, जो सुनने में मधुरता से युक्त, कर्णप्रिय, वैचित्रतापूर्ण तथा आनंददायक होता है। आज के समय में शास्त्रीय संगीत के कलाकार रागों को अपने मंच प्रदर्शन के समय प्रस्तुत करते हैं। रागों में मधुरता और वैचित्र्य लाने के लिए सितार वाद्य पर निरंतर अभ्यास किया जाता है। सितार वाद्य पर अभ्यास से वादक के वादन मे मधुरता और तैयारी साफ झलकती है। इस प्रकार सभी गायकी के साथ अगर कलाकार को तानपुरे पर निरंतर स्वर मिलता रहे तो कलाकार को सुर गाने या वाद्य यंत्र बजाने मे सहायता मिलती रहेगी जिससे श्रोता भी प्रस्तुति का आनंद लेते रहेंगे।

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् विद्यार्थी सितार और तानपूरा विषय का अर्थ परिभाषा और सितार के अंगों एवं रूपों के बारे मे विस्तार से अध्ययन कर पाएंगे तथा साथ ही सितार वादन पर रागों के अभ्यास से अपने वादन मे मधुरता ला सकेंगे। विद्यार्थी इस विषय के अध्ययन के पश्चात सितार के साथ सही व्यवहार करने मे समर्थ हो सकेंगे। साथ ही तानपुरा विषय के अध्ययन के माध्यम से अपने गायन और वादन मे तानपुरे का प्रयोग कर मधुरता ला सकेंगे।

5.2 उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन करने के पश्चात् विद्यार्थी

- सितार वाद्य का अर्थ समझ सकेंगे।
- सितार के ऐतिहासिक पक्ष को समझ सकेंगे।
- सितार के अंगों का विस्तार से अध्ययन कर सकेंगे।
- सितार वाद्य को सुर मे करना सीख सकेंगे।

- तानपूरा वाद्य का अर्थ समझ सकेंगे।
- तानपूरा के ऐतिहासिक पक्ष को समझ सकेंगे।
- तानपूरा के अंगों का विस्तार से अध्ययन कर सकेंगे।
- तानपूरा वाद्य को सुर मे करना सीख सकेंगे।

इन उद्देश्यों के माध्यम से, विद्यार्थी न केवल सितार और तानपूरा वाद्य के तकनीकी पहलुओं को जान पाएंगे, बल्कि इसके गहरे सांगीतिक, सांस्कृतिक और भावनात्मक महत्व को भी समझ सकेंगे। इससे उनके संगीत के प्रति दृष्टिकोण में गहराई और समृद्धि आएगी, साथ ही मंच प्रदर्शन मे परिपक्क्वता का अनुभव भी प्राप्त होगा, जो कि उनके भविष्य में सहायक सिद्ध होगा।

5.3 सितार परिचय

सितार के आविष्कार के सम्बन्ध में अभी तक कोई निश्चित मत नहीं है। बहुत-से लोगों का विचार है कि चौदहवीं शताब्दी में अमरी खुसरो ने वीणा के आधार पर 'सहतार' नामक वाद्य का आविष्कार किया। 'सहतार' एक फारसी शब्द है जिसका अर्थ होता है, तीन तार का वाद्य । 'सहतार' ही बिगड़कर 'सितार' कहलाने लगा । प्रारम्भ में इस वाद्य में कुल तीन तार होते थे, परन्तु परिवर्तन के अनुसार तीन के स्थान पर अब इसमें सात तार लगाये जाने लगे हैं।

सितार के अंग

तूम्बा कद्दू अथवा लौकी का बना गोलाकार भाग तूम्बा कहलाता है

तबली- तूम्बे के ऊपर उसे ढँकने के लिए पतली लकड़ी का जो ढक्कन होता है, जिस पर घुरच आदि रखे जाते हैं, तबली कहलाती है।

घुरच- तबली के ऊपर लकड़ी अथवा हड्डी की एक चौकी होती है जिस पर सितार के तार रखे रहते हैं, घुरच (Bridge) कहलाती है।

कील या लँगोट- तूम्बे के सिरे पर सितार के तारों को बाँधने का जो प्रबन्ध होता है, उसमें अधिकतर लकड़ी अथवा हड्डी की कील लगाते हैं जिसमें तार बाँधे जाते हैं। इस कील को लँगोट, मोंगरा अथवा कील कहते हैं।

डाँड- तूम्बे के बाद जो लम्बा भाग सितार का होता है जिसमें खूंटियाँ आदि होती हैं, वह डाँड कहलाता है। यह लकड़ी का खोखला बना होता है। तानपूरे का डाँड सितार की डाँड से अधिक मोटा तथा गोलाकार होता है।

गुलू अथवा गुल- जिस स्थान पर तूम्बा और डाँड जुड़ते हैं उसे गुल अथवा गुलू कहते हैं।

तारगहन- खूँटियों के पास हड्डी या हाथी-दाँत की दो पट्टियाँ होती हैं। इसमें से जिसमें तार पिरोये जाते हैं तथा जिसमें तारों को पिरोने के लिए छिद्र होते हैं, उसे तारगहन कहते हैं।

अटी- तारगहन के बाद दूसरी पट्टी जिस पर तार रखे जाते हैं, वह अटी कहलाती है।

परदे- डाँड के ऊपर पीतल अथवा लोहे के परदे ताँत या धागे से बँधे रहते हैं, जिन पर अँगुली रखने से विभिन्न स्वर उत्पन्न किये जाते हैं। इनको 'परदे', 'सुन्दरी' अथवा 'कट' आदि नामों से पुकारते हैं। इनकी संख्या १६ से लेकर १९ तक होती है।

मनका- सितार के पहले तार में लँगोट (जहाँ तार बाँधे जाते है) और घुरच (Bridge) के बीच जो मोती पड़ी रहती है तथा जिसमें तार को स्वर से मिलाने में सहायता मिलती है, उसे मनका या गुरिया कहते हैं।

खूंटियाँ- सितार में लकड़ी की बनी सात खूंटियाँ होती हैं जिनसे तार कसे अथवा ढीले किये जाते हैं। तरब के सितार में १२ खूँटियाँ और होती हैं।

सितार के तार तथा उनका मिलाना -

सितार में सात स्वर होते हैं, जो इस प्रकार हैं-

(१) सितार का पहला तार फौलादी लोहे का बना होता है। इसे बाज का तार भी कहते हैं तथा मन्द्र सप्तक के मध्यम स्वर से इसे मिलाया जाता है। सितार-वादन में सबसे अधिक प्रयोग इसी तार का होता है, क्योंकि मन्द्र सप्तक के मध्य स्वर से तार सप्तक तक के स्वरों को इसी तार द्वारा निकालते हैं।

(२) सितार का दूसरा तार पीतल का बना होता है और जोड़ी का तार कहलाता है। इसे मन्द्र सप्तक के षड्ज स्वर से मिलाते हैं।

(३) दूसरे तार की तरह सितार का तीसरा तार भी पीतल का बना होता है। इसे भी जोड़ी का तार कहते हैं तथा मन्द्र सप्तक के षड्ज स्वर से मिलाते हैं।

क्योंकि ये तार मन्द्र सप्तक के षड्ज से मिलाये जाते हैं, इसलिए इन्हें जोड़ी के तार कहकर पुकारते हैं। सितार मिलाने के लिए सबसे पहले इन दो तारों को मिलाया जाता है, फिर बाद में अन्य तार मिलाये जाते हैं।

(४) सितार का चौथा तार लोहे का बना होता है जो पंचम का तार कहलाता है। इसे मन्द्र सप्तक के पंचम स्वर से मिलाया जाता है।

(५) सितार का पाँचवाँ तार पीतल का बना होता है परन्तु अन्य तारों से यह कुछ मोटा होता है। इसे अति मन्द्र सप्तक के पंचम स्वर से मिलाया जाता है। इसको भी 'पंचम का तार' अथवा 'लर्ज का तार' कहते हैं।

(६) सितार का छठा तार पतले फौलादी लोहे का बना होता है तथा 'चिकारी' अथवा 'पपैया का तार' कहलाता है। इसे मध्य सप्तक के षड्ज से मिलाया जाता है।

(७) सितार का सातवाँ तार भी पतले फौलादी लोहे का बना होता है। इसको भी 'चिकारी का तार' अथवा 'पपैया का तार' कहकर पुकारते हैं। इस तार को सप्तक के षड्ज स्वर से मिलाया जाता है। कुछ लोग इसे मध्य सप्तक के पंचम स्वर से भी मिलाते हैं, परन्तु तार सप्तक के षड्ज से मिलाने का अधिक प्रचार है।

सितार को मिलाते समय पहले जोड़ी के तारों को मिलाना चाहिए। इसके बाद बाज के तार को मिलाना चाहिए। बाज के तार के बाद पंचम के दोनों तारों को एक के बाद एक करके मिलाना चाहिए। इन दोनों तारों को मिलाने में इस बात की सावधानी रखनी चाहिए कि इनमें एक सप्तक का अन्तर होता है अर्थात् चौथा तार मन्द्र सप्तक के पंचम से मिलाया जाता है तथा पाँचवाँ पीतल का तार अतिमन्द्र सप्तक के पंचम स्वर से मिलाया जाता है। बाद में छठे और सातवें तार को क्रमशः उनके स्वरों में सावधानी से मिलाना चाहिए। ये दोनों तार अधिकतर झाला बजाने के काम आते हैं।

सितार

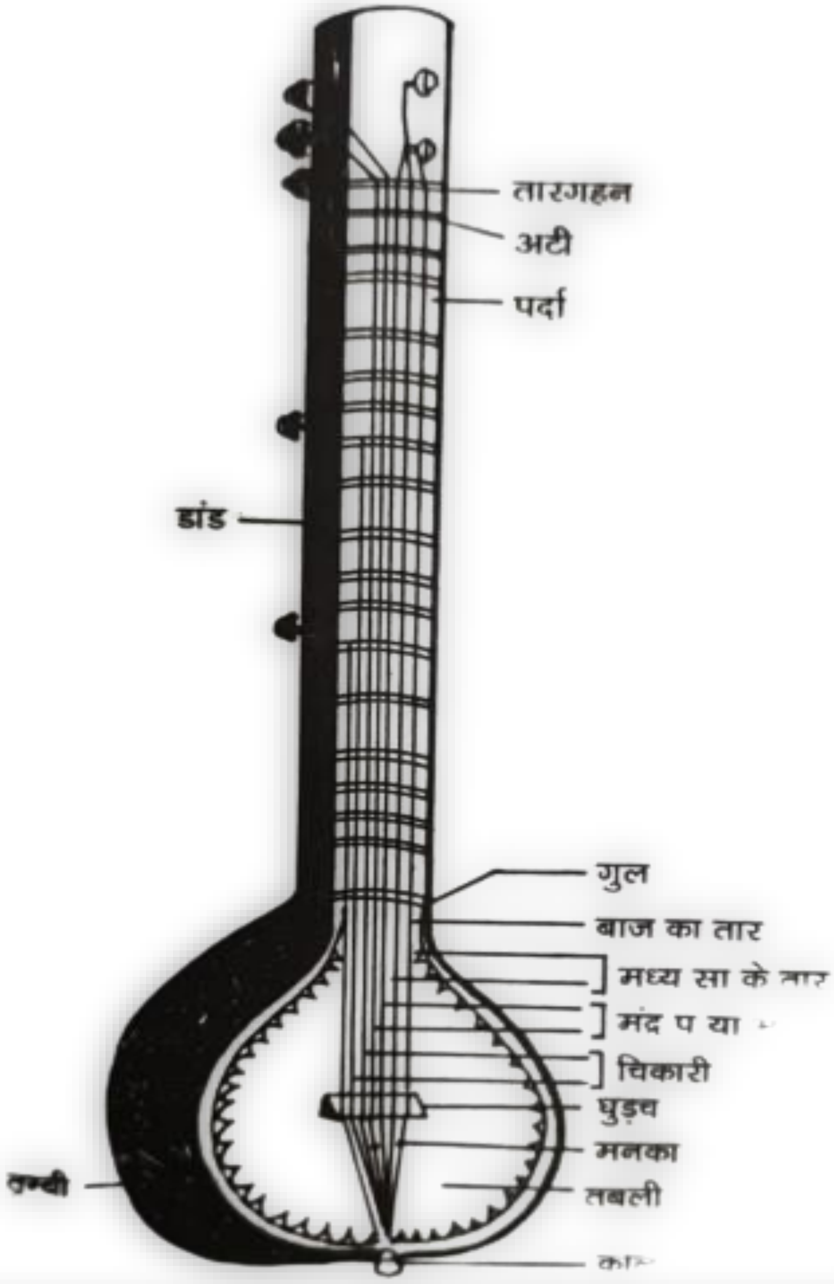

मिजराब-सितार बजाने के लिए लोहे के तार अथवा पीतल के मोटे तार का बना एक यन्त्र होता है जो सीधे हाथ की तर्जनी उँगली में पहना जाता है। सितार बजाने के लिए इस यन्त्र को उँगली में पहनकर तार पर प्रहार करते हैं, जिससे तार में कम्पन होता है और कम्पन से ध्वनि उत्पन्न होती है।

मिजराब में तार पर प्रहार दो प्रकार से होता है। एक जब उँगली को तार पर पटकते हुए अपनी ओर लाना होता है जो आकर्ष प्रहार कहलाता है। इसमें 'दा' का बोल निकलता है। दूसरा प्रहार इसका उल्टा होता है, अर्थात् तार पर मिजराब का प्रहार करके उँगली को अपनी ओर से ले जाना होता है। इसे अपकर्ष प्रहार कहते हैं और 'ड़' का बोल निकलता है।

कहने का अर्थ यह हुआ कि सतार के तार को बजाने के लिए उँगली दो प्रकार से चलायी जाती है- एक ओर तो उँगली को अपनी ओर लाते हैं जिससे 'दा' का बोल निकलता है तथा दूसरे जब उँगली को अपनी ओर से दूसरी ओर ले जाते हैं- यह पहले का उल्टा होता है और इससे 'ड़' का बोल निकलता है। इन्हीं दोनों प्रहारों को क्रमशः 'आकर्ष' और 'अपकर्ष' प्रहार कहकर पुकारते हैं।

सितार में यही 'दा' और 'ड़ा' मुख्य दो बोल हैं। इन्हीं दोनों को मिलाने से 'दिड़' बनता है अर्थात् 'दा' और 'ड़ा' बोलों को मिलाने से एक तीसरा बोल 'दिड़' बनता है। बहुत-से लोग 'ड़ा' के बोल को 'रा' कहकर पुकारते हैं और इस प्रकार 'दाड़ा' की जगह 'दारा' कहते हैं।

स्वयं मूल्यांकन प्रश्न

5.1 सितार कैसा वाद्य है?

1) तत् वाद्य

2) सुषिर वाद्य

3) घन वाद्य

4) अवनद्ध वाद्य

5.2 सितार मे मुख्य कितनी तारें होती है?

1) 1 या 2

2) 3 या 5

3) 5 या 6

4) 6 या 7

5.3 सितार मे तरब की तारें कितनी होती है?

1) 11 से 13

2) 14 से 18

3) 15 से 17

4) कोई नहीं

5.4 सितार का पहला तार कौन सा होता है?

1) फौलादी लोहे का तार

2) चिकारी का तार

3) बाज का तार

4) अन्य

5.5 सितार का दूसरा तार कौन सा होता है?

1) जोड़े का तार

2) चिकारी का तार

3) फौलादी लोहे का तार

4) अन्य

5.6 गायकी अंग वाले सितार मे चौथा तार और पाँचवाँ खूंटी वाला तार कौन सा होता है?

1) स्टील का

2) गांधार निषाद का

3) लोहे का

4) गांधार पंचम का

5.7 सितार की छठी और सातवीं खूटी वाले तार किस नाम से जाने जाते है?

1) परज़ का तार

2) चिकारी का तार

3) लरज़ का तार

4) बाज का तार

5.8 सितार के जिस भाग से तारें कसी या ढीली की जाती है, उसे .... कहते हैं।

1) परदा

2) अट्टी

3) खूंटी

4) अन्य

5.9 सितार के जिस भाग पर सारी तारें एकसाथ बंधी जाती है, उसे .... कहते हैं।

1) परदा

2) अट्टी

3) खूंटी

4) लंगोट

5.4 तानपूरा परिचय

भारतीय संगीत में अनेक प्रकार के वाद्य प्रचलित हैं। जैसे-सितार, तानपूरा, हारमोनियम, बेला, वीणा, सारंगी, इसराज, सरोद, तबला, पखावज, बाँसुरी, ढोलक इत्यादि। आधुनिक प्रचलित वाद्यों में से कुछ तो ऐसे हैं जो दूसरे देशों के हैं, लेकिन उन्हें हम लोगों ने अपना लिया है। जैसे- हारमोनियम, बेला, क्लोरोनेट इत्यादि तथा अन्य वाद्य भारतीय हैं। मुख्य रूप से हम इन वाद्यों को दो भागों में बाँट सकते हैं जिनसे स्वरों की उत्पत्ति होती है। जैसे- सितार, बेला, वीणा, हारमोनियम, सारंगी, बाँसुरी इत्यादि। ताल-वाद्य वे हैं जिनसे ताल की उत्पत्ति होती है, जैसे- तबला, मृदंग, पखावज, मॅजीरा, ढोलक इत्यादि।

तानपूरा - भारतीय संगीत में स्वर देने के लिए प्रमुख वाद्य का नाम तानपूरा है। तानपूरे को तम्बूरा, तानपूरा आदि नामों से भी पुकारा जाता है। तानपूरे का नाम उसके आविष्कार करनेवाले तुम्बरू नामक गन्धर्व पर ही पड़ा। तार-वाद्य होने के कारण गायन अथवा वादन में स्वर देने के लिए इसको सर्वोत्तम मानते हैं। नीचे इस वाद्य के विभिन्न अंगों को दिया जाता है :-

तूम्बा-लौकी अथवा कद्दू का बना गोलाकार बड़ा भाग तूम्बा कहलाता है।

तबली-तूम्बे को ढँकने के लिए पतली लकड़ी का जो ढक्कन होता है जिस पर घुरच आदि रखे जाते हैं, तबली कहलाती है।

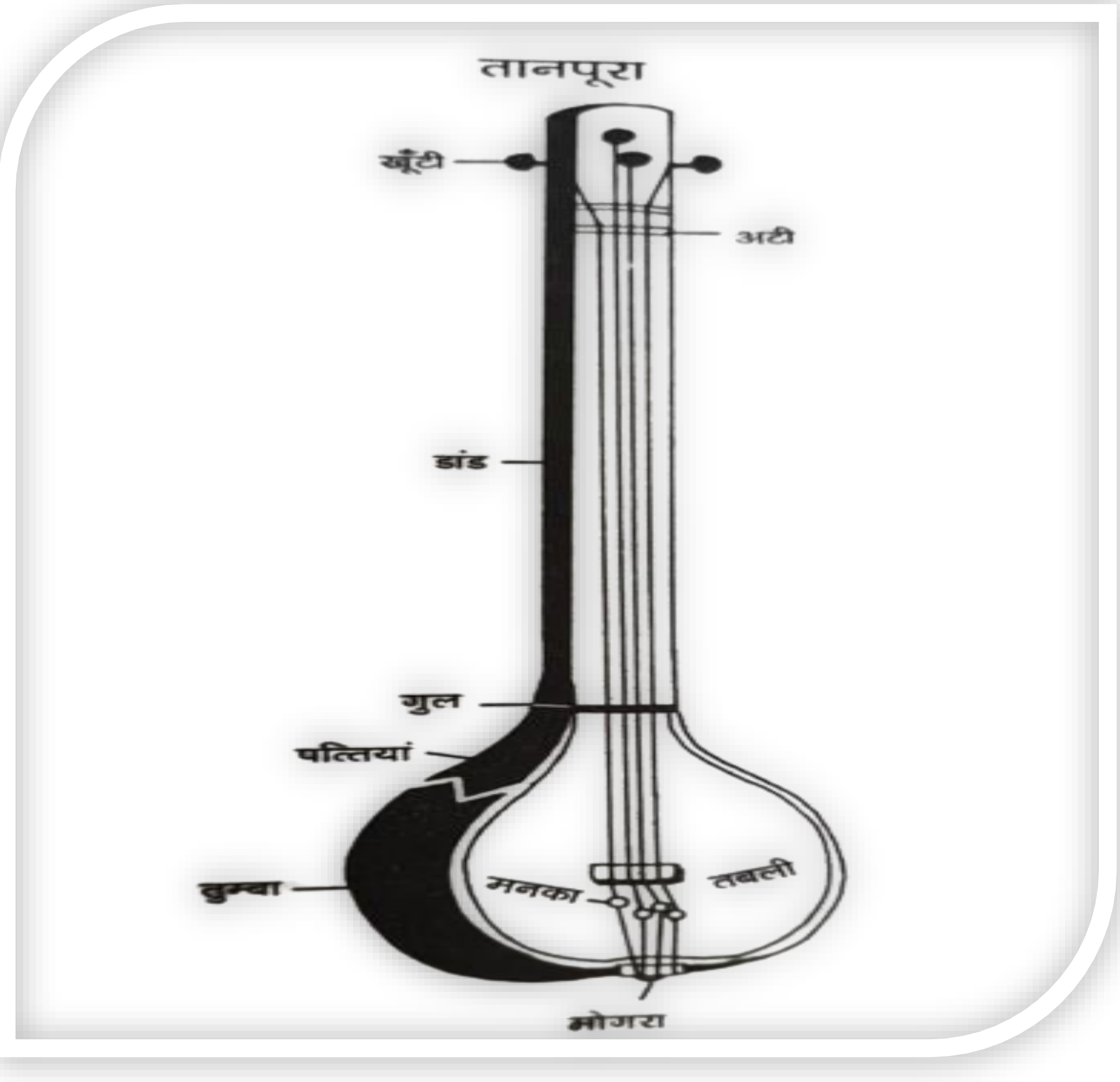

घुरच-तबली के ऊपर लकड़ी अथवा हड्डी की एक चौकी "होती है जिस पर तार रखे जाते हैं, वह घुरच (Bridge) कहलाती है।

कील या लँगोट-तूम्बे के सिर पर तारों को बाँधने का प्रबन्ध होता है। कभी तो लकड़ी की एक कील लगा दी जाती है और कभी लकड़ी में चार छिद्र कर दिये जाते हैं। इस स्थान को कील या लँगोट कहते हैं।

डाँड-तुम्बे के बाद जो लम्बा भाग तानपूरे का होता है, जिसमें खूंटियाँ आदि होती है, डाँड कहलाता है। यह भाग अन्दर से खोखला बना रहता है।

गुलू-तूम्बे और डाँड से जोड़ने के स्थान को गुलू कहते हैं।

अटी और तारगहन-खूंटियों के पास हड्डी की दो पट्टियाँ लगी रहती हैं जिन पर तार आधारित होते हैं। इन दोनों पट्टियों में से जिस पट्टी पर तार रखे रहते हैं, उसे अटी कहते हैं और जिस पट्टी में से तार पिरोये जाते हैं वह तारगहन अथवा तारदान कहलाती है।

खूँटियाँ-तानपूरे के अटी और तारगहन के पीछे चार खुटियाँ होती है जिनमें तार कसे रहते हैं। इन खूंटियों के द्वारा ही तारों को कसा अथवा ढीला किया जाता है।

सिरा-अटी तारगहन के बाद तानपूरे का वह भाग जिसमें चार खूंटियाँ होती हैं, सिरा कहलाता है।

मनका-घुरच (Bridge) तथा कील के बीच तारों में मोती पड़े रहते हैं जो हाथी के दाँत, हड्डी अथवा काँच के होते हैं। इन मोतियों से तार को स्वर मिलाने में सहायता मिलती है। इन्हें मनका अथवा गुरिया कहकर पुकारते हैं।

तार-तानपूरे में चार तार होते हैं। इनमें से तीन फौलादी लोहे के होते हैं तथा एक पीतल का मोटा तार होता है। किसी-किसी तानपूरे में पीतल के दो तार होते हैं- एक मोटा और एक पतला। ये चारों तार कील अथवा लँगोट में बाँधे जाते हैं तथा घुरच के ऊपर से जाकर अटी और तारगहन में से होकर खूंटियों में लपेटे जाते हैं।

सूत का धागा घुरच पर तारों के नीचे सूत लगा रहता है। सूत के कारण ही तार में झनकार होती है। तार में झनकार उत्पन्न करने को जवारी खोलना कहते हैं।

तानपूरे के तारों को मिलाना तानपूरे में चार तार होते हैं- पहला तार फौलादी लोहे का होता है। कभी-कभी मर्दाने तानपूरे का पहला तार पीतल का होता है। इस तार को 'पञ्चम का तार' कहते हैं तथा इसे मन्द्र सप्तक के पंचम स्वर से मिलाते हैं। जिस राग में पंचम स्वर वर्जित होता है जैसे-मालकौंस उसमें इस तार को मन्द्र सप्तक के शुद्ध मध्यम स्वर से मिलाते हैं। तानपूरा मिलाने के लिए सर्वप्रथम बीच के दो तारों को गायक अपने गले के स्वर (षड्ज) से मिलाता है। चौथा तार मोटे पीतल का होता है, उसे मन्द्र सप्तक के षड्ज से मिलाया जाता है। चूँकि यह मन्द्र के षड्ज से मिलाया जाता है, इसलिए इसे 'खरज का तार' भी कहकर पुकारते हैं।

तानपूरे के पहले अर्थात् पंचम के तार को मध्यमांगुली से तथा बाकी के तीन तारों को तर्जनी अँगुली से बजाया जाता है।

स्वयं मूल्यांकन प्रश्न

5.10 तानपूरा कैसा वाद्य है?

1) तत् वाद्य

2) सुषिर वाद्य

3) घन वाद्य

4) अवनद्ध वाद्य

5.11 अधिकतर महिला तानपूरा कितनी तारें होती है?

1) 1

2) 3

3) 5

4) 4

5.12 अधिकतर पुरुष तानपूरा कितनी तारें होती है?

1) 1

2) 3

3) 5

4) 4

5.13 अधिकतर तानपुरे का पहला तार कौन सा होता है?

1) बाज का तार

2) चिकारी का तार

3) फौलादी लोहे का तार

4) अन्य

5.14 कभी-कभार मर्दाना तानपुरे का पहला तार कौन सा होता है?

1) पीतल का तार

2) चिकारी का तार

3) फौलादी लोहे का तार

4) अन्य

5.15 तानपुरे का चौथा तार कौन सी धातु का होता है?

1) स्टील का

2) फौलादी लोहे का

3) लोहे का

4) पीतल धातु

5.16 तानपुरे का चौथा तार किस नाम से जाना जाता है?

1) परज़ का तार

2) खरज़ का तार

3) लरज़ का तार

4) बाज का तार

5.17 तानपुरे के जिस भाग पर से तारें कसी या ढीली की जाती है, उसे .... कहते हैं।

1) परदा

2) अट्टी

3) खूंटी

4) अन्य

5.5 सारांश

सितार भारतीय शास्त्रीय संगीत का एक महत्वपूर्ण विषय है, जिसके बिना अच्छे संगीत की कल्पना भी नहीं की जा सकती। सितार पर निरंतर अभ्यास से शास्त्रीय संगीत मे तैयारी और परिपक्क्वता आती है, जो श्रोताओं को अनायास ही मंत्रमुग्ध करती हैं। शास्त्रीय संगीत मे सितार पर अभ्यास से संगीतज्ञ के वादन मे रंजकता और परिपक्क्वता आती है। सितार पर कोई भी राग और किसी भी तरह का संगीत बजाया जा सकता है।

5.6 शब्दावली

- अलंकार (Alankar): जिस प्रकार एक स्त्री सुन्दर दिखने के लिए आभूषणों से खुद को सजाती है वही स्थान संगीत मे अलंकार का है।
- राग (Raga): संगीत का एक विशेष संरचनात्मक पद्धति, जो स्वरों के विशेष क्रम का उपयोग करके भावनात्मक और मनोरंजन को व्यक्त करता है।
- ताल (Taal): संगीत में अंकित समय स्तर को ताल कहा जाता है, जो गायन या वादन के साथ समय की गणना करने में मदद करता है।
- लय (Lay): संगीत में गति या चलन को लय कहा जाता है, जो ताल की गति को निर्दिष्ट करता है।
- रागिनी (Ragini): रागों की सहायक संगीत पद्धति जिसमें संगीत रागों के विभिन्न अनुभवों और भावों को व्यक्त करने के लिए मेलोडी और ताल का उपयोग किया जाता है।
- श्रुति (Shruti): संगीत में सबसे छोटे स्वर को श्रुति कहा जाता है, जो स्वर स्थान पर किसी भी विस्तार में पाया जा सकता है।

- स्वर (Swar): संगीत में विभिन्न ऊर्जाओं को स्थान देने वाले तारों को स्वर कहा जाता है, जो संगीत के मूल भाग हैं।
- मेलोडी (Melody): संगीत में स्वरों के विशेष क्रम का एक संरचित और आकर्षक संयोजन, जिससे एक गाना या संगीत कविता का निर्माण होता है।
- ज्वारी (jwari): सितार का एक ऐसा हिस्सा जिसके ऊपर से होते हुए सभी तारें खूँटियों से लंगोट की तरफ जाती हैं, और ज्वारी से ही सितार की आवाज अपने मन के अनुसार कारीगर द्वारा बनवाई या रिपेयर की जाती है।

5.7 स्वयं जांच अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

आत्म-मूल्यांकन प्रश्न 1

5.1) उत्तर: 2

5.2) उत्तर: 4

5.3) उत्तर: 1

5.4) उत्तर: 3

5.5) उत्तर- 1

5.6) उत्तर: 4

5.7) उत्तर: 2

5.8) उत्तर: 3

5.9) उत्तर: 4

आत्म-मूल्यांकन प्रश्न 2

5.10) उत्तर: 2

5.11) उत्तर: 4

5.12) उत्तर: 4

5.13) उत्तर: 3

5.14) उत्तर- 1

5.15) उत्तर: 4

5.16) उत्तर: 2

5.17) उत्तर: 3

5.8 संदर्भ

भातखंडे, विष्णुनारायण. (1970). कर्मिक पुस्तक मलिका. खंड 1-6, संगीत कार्यालय हाथरस।

श्रीवास्तव, हरिश्चद्र. (2015). राग परिचय (भाग 1), संगीत सदन प्रकाशन, इलाहबाद।

मृत्युंजय, डॉ. शर्मा. (2000). संगीत मैनुअल. ए.जी. पब्लिकेशन, दिल्ली।

श्रीवास्तव, हरिश्चद्र. (2010). राग परिचय (भाग 4), संगीत सदन प्रकाशन, इलाहबाद।

प्रो. केशव शर्मा द्वारा साक्षात्कार से प्राप्त जानकारी।

डॉ. मृत्युंजय शर्मा द्वारा साक्षात्कार से प्राप्त जानकारी।

डॉ. निर्मल सिंह द्वारा साक्षात्कार से प्राप्त जानकारी।

5.9 अनुशंसित पठन

श्रीवास्तव, हरिश्चद्र. (2015). राग परिचय (भाग 2), संगीत सदन प्रकाशन, इलाहबाद।

श्रीवास्तव, हरिश्चद्र. (1998). मधुर स्वरलिपि संग्रह. संगीत सदन प्रकाशन, इलाहबाद।

5.10 पाठगत प्रश्न
सितार

प्रश्न 1. सितार वाद्य का परिचय लिखिए।

प्रश्न 2. सितार वाद्य का इतिहास लिखें।

प्रश्न 3. सितार वाद्य का संक्षिप्त परिचय और अंगों का विस्तार सहित वर्णन करें।

प्रश्न 4. सितार का वाद्य का इतिहास और इसके अंगों का विस्तार सहित वर्णन करें।

प्रश्न 5. सितार वाद्य के अंगों का विस्तार सहित वर्णन सचित्र करें।

तानपूरा

प्रश्न 1तानपूरा विषय का परिचय लिखिए।

प्रश्न 2. तानपूरा वाद्य यंत्र के ऐतिहासिक पक्ष पर प्रकाश डालें।

प्रश्न 3 तानपूरा वाद्य यंत्र की उत्पत्ति विकास का विस्तार से वर्णन करें।

प्रश्न 4. तानपूरा वाद्य यंत्र की उत्पत्ति विकास और इसके अंगों का वर्णन करें।

प्रश्न 5 तानपूरा वाद्य यंत्र की उत्पत्ति विकास और इसके अंगों का सचित्र वर्णन करें।

प्रश्न 6 तानपूरा वाद्य यंत्र की उत्पत्ति विकास और इसके किन्हीं 10 अंगों का सचित्र वर्णन करें।

प्रश्न 7 तानपूरा वाद्य यंत्र की उत्पत्ति विकास और इसके किन्हीं 12 अंगों का सचित्र वर्णन करें।

इकाई-6
पं० भीमसेन जोशी और स्वर कोकिला लता मंगेशकर

इकाई की रूपरेखा

6.1	भूमिका
6.2	उद्देश्य
6.3	पं० भीमसेन जोशी जीवन परिचय
	स्वयं जांच अभ्यास 1
6.4	स्वर कोकिला लता मंगेशकर जीवन परिचय
	स्वयं जांच अभ्यास 2
6.5	सारांश
6.6	शब्दावली
6.7	स्वयं जांच अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
6.8	संदर्भ
6.9	अनुशंसित पठन
6.10	पाठगत प्रश्न

6.1 भूमिका

संगीत (गायन तथा वादन) में, स्नातक के क्रियात्मक पाठ्यक्रम MUSA303 की यह छठी इकाई है। इस इकाई में संगीत, विशेष रूप से गायन और सितार वाद्य के संदर्भ में, पं० भीमसेन जोशी और स्वर कोकिला लता मंगेशकर का परिचय और इनके सांगीतिक योगदान का विस्तृत अध्ययन किया गया है।

संसार की कोई भी विधा/संगीत क्यों न हो, जाब तक उसका इतिहास न जाना जाए, उस संगीत को जड़ से जानना असंभव सा प्रतीत होता है। इसी प्रकार संगीत की बारीकियों को समझने के लिए संगीत से जुड़े उन महान संगीतज्ञों के बारे मे अध्ययन करना बहुत महत्त्वपूर्ण हो जाता है, जिन्होंने अपना सर्वस्व संगीत के लिए न्योछावर कर दिया। उन महान संगीत गुनीजनों के जीवन का गूढ़ता से अध्ययन किया जाता है और उनके समय मे संगीत की स्थिति का और उनके द्वारा किए गए संगीत के उत्थान का अध्ययन किया जाता है। इन गुनीजनों के द्वारा रचित रचनाओं लेखों और रागों के अध्ययन से संगीत विषय मे निपुणता प्राप्त की जा सकती है। उन्हीं महान संगीतज्ञों मे से पं० भीमसेन जोशी और स्वर कोकिला लता मंगेशकर भी हैं। इनके जीवन का अध्ययन किसी भी संगीतज्ञ के लिए बहुत आवश्यक है। इनके जीवन परिचय से, इनके संगीत के प्रति समर्पण से कोई भी प्रेरित हुए बिना नहीं रह सकता अर्थात अनायास कि प्रेरित हो जाता है।

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् विद्यार्थी पं० भीमसेन जोशी और स्वर कोकिला लता मंगेशकर के जीवन परिचय का विस्तार से अध्ययन कर सकेंगे और इनके द्वारा सांगीतिक योगदान का अध्ययन कर प्रेरणा पा सकते हैं।

6.2 उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन करने के पश्चात् विद्यार्थी

- पं० भीमसेन जोशी के सांगीतिक यात्रा को जान पाएंगे।
- पं० भीमसेन जोशी के संगीत के प्रति निःस्वार्थ प्रेम और जनून को जान पाएंगे।
- पं० भीमसेन जोशी के सांगीतिक योगदान को जान पाएंगे।
- पं० भीमसेन जोशी के सांगीतिक योगदान के साथ साथ इनके शिष्यों और इनकी उपलब्धियों को जान पाएंगे।

- स्वर कोकिला लता मंगेशकर के सांगीतिक यात्रा को जान पाएंगे ।
- स्वर कोकिला लता मंगेशकर के संगीत के प्रति निःस्वार्थ प्रेम और जनून को जान पाएंगे।
- स्वर कोकिला लता मंगेशकर के सांगीतिक योगदान को जान पाएंगे।
- स्वर कोकिला लता मंगेशकर के सांगीतिक योगदान के साथ साथ इनके शिष्यों और इनकी उपलब्धियों को जान पाएंगे।

इन उद्देश्यों के माध्यम से, विद्यार्थी न केवल पं० भीमसेन जोशी और स्वर कोकिला लता मंगेशकर के जीवन परिचय का अध्ययन कर परएंगे, बल्कि इसके गहरे सांगीतिक, सांस्कृतिक और भावनात्मक महत्व को भी समझ सकेंगे। इससे उनके संगीत के प्रति दृष्टिकोण में गहराई और समृद्धि आएगी, साथ ही मंच प्रदर्शन और सांगीतिक यात्रा मे परिपक्क्वता का अनुभव भी प्राप्त होगा, जो कि उनके भविष्य में सहायक सिद्ध होगा।

6.3 पं० भीमसेन जोशी परिचय

पद्मश्री पं० भीमसेन जोशी की गणना आधुनिक काल के उत्कृष्ट कलाकारों में की जाती है। उनके स्वरों का लगाव और बढ़त किराना घराने की समृद्धि परम्परा की याद दिलाती है। जिसने कभी स्व० पं० सवाई गांधर्व का गायन सुना है, वे १० भीगसेन जोशी का गायन सुनते ही पहचान लेते हैं। पं० भीमसेन जोशी ने अपनी गायकी से किराना घराने को समृद्धशाली बनाया। लम्बी हरहाहट की तानें उनके निजी गायन की विशेषता है। एक साँस में वे इतनी लम्बी तानें गा जाते हैं कि किसी अन्य गायक अथवा गायिका के मान की बात नहीं। अपने गायन के अंत में राग जोगिया में निबन्ध ठुमरी 'पिया बिन नहीं आवत चैन' तथा भजन 'जो भजे हरि को सदा, वह परम पद पायेगा' का निर्वाह इतना भावमय करते हैं कि काफी समय तक कानों में गूँजती रहती हैं। लब्ध प्रतिष्ठित होने के कारण बहुधा उनका कार्यक्रम सभा के अंत में रक्खा जाता है ।

प्रातः कालीन रागों में ललित, भैरवी, जोगिया और तोड़ी उनके प्रिय राग हैं। सायकालीन रागों में पूरिया, मारवा, पूरिया कल्याण, मालकोश और दरबारी कान्हड़ा उनके प्रिय राग हैं। किराना घराने के अन्य गायकों के समान उनको गायको

चैनदारी और आलाप प्रधान है। तबलिया के साथ लडन्त भिड़न्त उनको पसन्द नहीं है, किन्तु संगतिकार को अपनी कला दिखाने का अवसर दे दिया करते हैं।

पं० भीमसेन जोशी का जन्म 4 फरवरी 1922 को पंडित गुरूनाथ जोशी के पुत्र रूप में हुआ। इनके दादा सगीत साधना किया करते थे। अतः बाल्यकाल से इनका झुकात्र संगीत के प्रति हुआ । कहीं भी संगीत की मधुर ध्वनि सुनाई पड़ती तो बालक भीमसेन उसे सुनने निकल जाते । इनकी संगीत की प्रारम्भिक शिक्षा पं० अगसक चनप्पा से प्रारम्भ हुई और आगे की शिक्षा किराना घराने के मानद गायक पं० सवाई गांधर्व से प्राप्त हुई। पं० सवाई गांधर्व की शिक्षा ने इन्हें लब्ध प्रतिष्ठित गायक बन दिया। भारत के कोने-कोने में इनके कार्यक्रम हो चुके हैं और आकाशवाणी के किसी न किसो केन्द्र से नित्य प्रति उनके सुमधुर गायन प्रसारित होते रहते हैं। इनकी सांगीतिक उपलब्धि की मान्यता भारत सरकार ने सन् 1972 में पद्मश्री तथा 1985 मे पद्मभूषण की उपाधि देकर की। 4 नवंबर 2008 के दिन ये कलाकार को भारत के सर्वोच्च पुरस्कार भरत रत्न से सम्मानित किया गया। 24 जनवरी 2011 को संगीत का ये सूर्य इस भौतिक संसार से विदा हो गया।

स्वयं मूल्यांकन प्रश्न

6.1 पंडित भीमसेन जोशी का जन्म कब हुआ?

1) 4 फरवरी 1923

2) 4 फरवरी 1932

3) 4 फरवरी 1922

4) कोई नहीं

6.2 पंडित भीमसेन जोशी के गुरु का नाम क्या था?

1) पं० सवाई गांधर्व

2) स्वामी हरीदास

3) गोपाल नायक

4) सभी

6.3 पंडित भीमसेन जोशी किस घराने से संबंध रखते है?

1) मेवाड़

2) किराना

3) दिल्ली

4) ग्वालियर

6.4 पंडित भीमसेन जोशी को पद्मश्री कब मिला?

1) 1990

2) 1987

3) 1972

4) कोई नहीं

6.5 पंडित भीमसेन जोशी को पद्मभूषण कब मिला?

1) 2001

2) 2004

3) 2000

4) 1985

6.6 पंडित भीमसेन जोशी को भरत रत्न पुरस्कार कब मिला?

1) 2008

2) 2004

3) 2000

4) 1985

6.7 पंडित भीमसेन जोहसी का देहांत कब हुआ?

1) 24 जनवरी 2012

2) 24 जनवरी 2011

3) 24 जनवरी 2010

4) 24 मार्च 2011

6.4 लता मंगेशकर जीवन परिचय

कोकिला कण्ठी लता मंगेशकर का जन्म 28 सितम्बर सन् 1929 को इन्दौर में हुआ। इनके पिता जी का नाम दीना नाथ मंगेशकर था। लता जी ने 13 वर्ष की आयु में सन् 1945 में बम्बई जिसे आज मुम्बई के नाम से जाना जाता है की ओर मुंह घुमाया। इन्होंने उस्ताद अमानत अली खॉ भिन्डी बाज़ार वाले से संगीत की शिक्षा ली, लेकिन भारत-पाक विभाजन के समय खाँ साहिब पाकिस्तान चले गए। इसके पश्चात् लता जी ने अमानत खाँ देवास वालों से संगीत की शिक्षा प्राप्त की। पं० तुलसी दास शर्मा और उस्ताद बड़े गुलाम अली खाँ जैसे जाने-माने कलाकारों से संगीत सीखा। लता जी ने जिस समय हिन्दी फिल्मों में गायकी की शुरूआत की उस दौरान नूरजहाँ, शमशाद बेगम और जोहरा बाई अम्बाले वाली आदि गायिकाएं अपनी गायकी में दूर-दूर तक प्रचलित थीं। सन् 1947 में शहीद फिल्म के लिए गुलाम हैदर ने लता जी को अवसर देना चाहा, लेकिन निर्माता शशीधर मुखर्जी ने पतली आवाज़ कह कर नकार दिया। उस समय गुलाम हैदर ने कहा था कि एक दिन हिन्दी फिल्मों के निर्माता-निर्देशक लता के पास जाकर अपनी फिल्मों में गीत गाने की भीख मांगेंगे। सन् 1949 में महल फिल्म में गाया गीत आएगा, आएगा, आएगा आने वाला, ने लोगों का ध्यान अपनी ओर आकर्षित किया। भारतीय शास्त्रीय संगीत के जाने-माने गायक स्व० उस्ताद अमीर खाँ ने लता जी के बारे में कहा था, "हमने बरसों रियाज़ किया, जो बात हम तीन घण्टे में करते हैं, ये लडकी तीन मिनट में कर देती है"। इतनी बड़ी बात इतने बड़े गायक ने जिस सहजता से कही है बिना एक पल सोचे यही बात आज प्रत्येक व्यक्ति के मुख से ही नहीं अपितु दिल से निकल रही है। लता जैसी गायिका युग में एक ही पैदा होती है, लगता है कि जैसे संगीत की आत्मा उसकी वाणी में समा गई हो। लता जी भारत की एक अमूल्य निधि हैं। लोग कहते हैं कि लता जी महाराष्ट्र की हैं, लेकिन यह बात पूरी तरह गलत है, क्योंकि पंजाबी कहते हैं कि ये पंजाबन हैं। इससे यह पता चलता है कि प्रत्येक भारतीय इन्हें अपनी मान लेता है, क्योंकि लता जी ने प्रत्येक भाषा और वर्ग के लिए गीत गाए हैं। जिस भाषा को भी लता जी ने अपनी वाणी दी है, वह उसी की हो गई। भाषा के साथ-साथ लता में भावों को भी सांगीतिक सार्थकता प्रदान

करने की एक अनोखी क्षमता है, जिसको व्यक्त करने के लिए भाषा भी कई बार असमर्थ हो जाती है। इनके स्वरों में प्रत्येक शब्द पूर्णता प्राप्त कर लेता है। लता जी ने सर्वप्रथम जो गीत गाया वह बसन्त जोगलेकर की हिन्दी फिल्म 'आप की सेवा में गाया, जिसके संगीतकार दत्ता डावजेकर थे। यह लता का प्रथम गीत था। उस समय उनके पारिवारिक हालात ठीक नहीं थे, घर की ज़िम्मेदारियों के कारण संकट के बादल छाए हुए थे। धीरे-धीरे समय ने करवट ली और इनकी आवाज़ का जादू चारों ओ फैलने लगा। संगीत निर्देशक नौशाद ने ऐसे अंदाज़ में फिल्मी गीत गवाए तथा खेम चन्द प्रकाश की महल और शंकर जयकिशन की बरसात के साथ लता जी दुनिया में आफताब की तरह चमकने लगीं।

लता जी का कहना है कि उन्हें इस मुकाम तक आने के लिए बहुत मेहनत करनी पड़ी है। उस ज़माने में बहुत सख़्त मेहनत होती थी। उस समय ऑरकेस्ट्रा इतना आधुनिक नहीं था। उस समय अच्छे रिकार्डिंग कक्ष भी नहीं थे। जितनी मेहनत उस समय की जाती थी उतना उसका मेहनताना भी नहीं मिलता था। लता जी का कहना है कि मैं गीत की रिकॉर्डिंग से पूर्व संगीतकार की बनाई हुई धुन को टेप कर लेती हूँ, फिर लिखे हुए गीत के शब्दों के साथ टेप और धुन के साथ अभ्यास करती हूँ, इसके पश्चात् मुझे गीत गाने में कोई अड़चन नहीं आती। आज भी गायक कलाकारों को फिल्मी सितारों से कम ही मेहनताना मिलता है। जब की गायक का भी फिल्म में एक बड़ा योगदान होता है। इनका कहना है कि आज भी हमारे देश में पुराने संगीतकारों की तरह अच्छे-अच्छे संगीतकार विद्यमान हैं और अच्छी-अच्छी स्वर रचनाएँ भी सुनने को मिलती है।

लता जी का कहना है कि वे सफलता के ऊपर वाले बिन्दु पर उस ज़माने में पहुँची हैं, परन्तु ईमानदारी की बात यह है कि उस समय को कला के रूप में अपनाया जाता था, लेकिन अब संगीत केवल एक व्यवसाय बन कर रह गया है। पहले का संगीत आज भी उतना ही प्रचलित है जबकि आज के संगीतकारों में केवल यही दोष है कि आज के संगीतकार उबाल की तरह उठते हैं और जल्दी ही बैठ जाते हैं।

लता जी का आरम्भिक जीवन बेफिक्री से गुज़रा। लता जी के घर में छोटी तीन बहनें और एक भाई है। लता जी संगीत को ही अपनी पूंजी मानती है। इनके पिता जी नहीं चाहते थे कि लता फिल्मों में गाए। सन् 1942 में लता जी ने प्रथम गीत कीर्ति हसाल नामक मराठी फिल्म में गाया, परन्तु पिता दीनानाथ ने वह गीत फिल्म से निकलवा दिया। लता जी की गायकी सदैव नई रही है। इन्होंने 65 वर्ष की आयु में एक गीत गाया था, 'दीदी तेरा देवर दिवाना जो बहुत प्रसिद्ध हुआ।

लता जी के जन्म के समय इनका नाम हृदयका रखा गया, लेकिन बाद में इनके पिता जी ने एक नाटक देखा जिसमें लतिका नामक किरदार थी, उससे प्रेरित होकर इनका नाम लता रखा गया। इनका समस्त परिवार संगीत से जुड़ा हुआ है। इनकी छोटी बहनें आशा भोंसले, उषा मंगेशकर, मीना मंगेशकर और भाई हृदय नाथ मंगेशकर भी गायन में अत्यन्त निपुण कलाकार हैं। आप की सुरीली आवाज़ को उस्ताद अमानत अली खाँ भिन्डी बाज़ार वाले, अमानत अली देवास वाले, पं० तुलसी दास शर्मा और गुलाम मुहम्मद आदि ने निखारा। लता जी ने सन् 1960 के दशक में बैजूबांवरा, मुगलेआज़म, कोहीनूर, आग, श्री 420, मधुमती जैसी फिल्मों में बहुत से यादगार गीत गाए। इसके अतिरिक्त 1970 के यह बात दशक में पाकीज़ा, शर्मीली, अभिमान जैसी यादगार फिल्मों के गीत गा कर अपने चाहने वालों के दिल में एक अमिट छाप छोड़ दी। इसके अतिरिक्त 1980 के आर दशक में चाँदनी, लम्हें, लेकिन, डर, हीर रांझा, दिल वाले दुल्हनिया ले जाऐंगे अपनी आदि फिल्मों के गीत गाए। तब से लेकर आज तक ये अपने मधुर कंठ, व सुरीले गीतों से सभी के दिलों में बस बस गई हैं। फिल्मी गीतों के अतिरिक्त इन्होंने असंख्य गैर फिल्मी गीत भी गाए। इस प्रकार इनके द्वारा गाए गए गीतों की सूची बहुत अधिक लम्बी है। लता जी के प्रेरणा स्रोत के० एल० सहगल थे। इन्हें इनके पूरे गायन जीवन में बहुत से पुरस्कारों और सम्मानों से सम्मानित किया गया है। जिनमें सर्वोच्च सम्मान 'भारतरत्न' मुख्य हैं। आज स्वरों की मल्लिका लता मंगेशकर का गायन जीवन लगभग पिछले सात दशकों से निरन्तर चला आ रहा है, जिसकी शुरूआत सन् 1942 में में हुई थी। बॉलीवुड की 1000 से अधिक फिल्मों और बीस से अधिक भारतीय भाषाओं के के गीतों में अपनी आवाज़ दे चुकी 'भारतरत्न लता मंगेशकर की आवाज का जादू आज भी कायम है और सदा रहेगा। संगीत जगत का ये चमकता सितारा इस भौतिक जगत से 6 फरबरी 2022 को अस्त हो गया।

स्वयं मूल्यांकन प्रश्न

6.8 लता मंगेशकर जी का जन्म कब हुआ ?

1) 28 सितम्बर सन् 1930

2) 28 सितम्बर सन् 1935

3) 28 सितम्बर सन् 1929

4) कोई नहीं

6.9 लता मंगेशकर का जन्म कहाँ हुआ?

1) इंदौर

2) मुंबई

3) पंजाब

4) कोई नहीं

6.10 इनके पिता का नाम क्या था?

1) राम नाथ मंगेशकर

2) दीना नाथ मंगेशकर

3) रघु नाथ मंगेशकर

4) कोई नहीं

6.11 लता मंगेशकर को भरत रत्न पुरस्कार कब मिला?

1) 2001

2) 2003

3) 2005

4) कोई नहीं

6.12 लता मंगेशकर का देहांत कब हुआ?

1) 6 फरबरी 2021

2) 6 फरबरी 2020

3) 6 फरबरी 2022

4) कोई नहीं

6.6 शब्दावली

- अलंकार (Alankar): जिस प्रकार एक स्त्री सुन्दर दिखने के लिए आभूषणों से खुद को सजाती है वही स्थान संगीत मे अलंकार का है।
- राग (Raga): संगीत का एक विशेष संरचनात्मक पद्धति, जो स्वरों के विशेष क्रम का उपयोग करके भावनात्मक और मनोरंजन को व्यक्त करता है।
- ताल (Taal): संगीत में अंकित समय स्तर को ताल कहा जाता है, जो गायन या वादन के साथ समय की गणना करने में मदद करता है।
- लय (Lay): संगीत में गति या चलन को लय कहा जाता है, जो ताल की गति को निर्दिष्ट करता है।
- रागिनी (Ragini): रागों की सहायक संगीत पद्धति जिसमें संगीत रागों के विभिन्न अनुभवों और भावों को व्यक्त करने के लिए मेलोडी और ताल का उपयोग किया जाता है।
- श्रुति (Shruti): संगीत में सबसे छोटे स्वर को श्रुति कहा जाता है, जो स्वर स्थान पर किसी भी विस्तार में पाया जा सकता है।
- स्वर (Swar): संगीत में विभिन्न ऊर्जाओं को स्थान देने वाले तारों को स्वर कहा जाता है, जो संगीत के मूल भाग हैं।
- मेलोडी (Melody): संगीत में स्वरों के विशेष क्रम का एक संरचित और आकर्षक संयोजन, जिससे एक गाना या संगीत कविता का निर्माण होता है।
- अलंकार (Alankaar): संगीत में आकर्षकता और सौंदर्य को बढ़ाने के लिए स्वरों या ताल के विशेष प्रयोग को अलंकार कहा जाता है।
- सितार (Sitar): सितार हिन्दुस्तानी शास्त्रीय संगीत का ऐसा वाद्य यंत्र है जिसे अपने अथक प्रयासों से पंडित रविशंकर जी ने हिंदुस्तान ही नहीं बल्कि समस्त जगत मे एक अलग पहचान दिलाई।

6.7 स्वयं जांच अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

आत्म-मूल्यांकन प्रश्न 1

6.1) उत्तर: 3

6.2) उत्तर: 1

6.3) उत्तर: 2

6.4) उत्तर: 3

6.5) उत्तर: 4

6.6) उत्तर: 1

6.7) उत्तर: 2

आत्म-मूल्यांकन प्रश्न 2

6.8) उत्तर: 3

6.9) उत्तर: 1

6.10) उत्तर: 2

6.11) उत्तर: 1

6.12) उत्तर: 3

6.8 संदर्भ

भातखंडे, विष्णुनारायण. (1970). कर्मिक पुस्तक मलिका. खंड 1-6, संगीत कार्यालय हाथरस।

श्रीवास्तव, हरिश्चद्र. (2015). राग परिचय (भाग 1), संगीत सदन प्रकाशन, इलाहबाद।

मृत्युंजय, डॉ. शर्मा. (2000). संगीत मैनुअल. ए.जी. पब्लिकेशन, दिल्ली।

श्रीवास्तव, हरिश्चद्र. (2010). राग परिचय (भाग 4), संगीत सदन प्रकाशन, इलाहबाद।

प्रो. केशव शर्मा द्वारा साक्षात्कार से प्राप्त जानकारी।

डॉ. मृत्युंजय शर्मा द्वारा साक्षात्कार से प्राप्त जानकारी।

डॉ. निर्मल सिंह द्वारा साक्षात्कार से प्राप्त जानकारी।

6.9 अनुशंसित पठन

श्रीवास्तव, हरिश्चद्र. (2015). राग परिचय (भाग 2), संगीत सदन प्रकाशन, इलाहबाद।

श्रीवास्तव, हरिश्चद्र. (1998). मधुर स्वरलिपि संग्रह. संगीत सदन प्रकाशन, इलाहबाद।

6.10 पाठगत प्रश्न

प्रश्न 1. पं० भीमसेन जोशी का संक्षिप्त परिचय लिखिए।

प्रश्न 2. पं० भीमसेन जोशी का संक्षिप्त जीवन परिचय और इनके सांगीतिक योगदान पर विस्तृत वर्णन कीजिए।

प्रश्न 3. पं० भीमसेन जोशी का जीवन परिचय और इनकी सांगीतिक उपलब्धियों पर विस्तृत प्रकाश डालें।

प्रश्न 4. पं० भीमसेन जोशी द्वारा रचित रचनाओं का विस्तार सहित वर्णन करें।

स्वर कोकिला लता मंगेशकर

प्रश्न 1 स्वर कोकिला लता मंगेशकर का संक्षिप्त परिचय लिखिए।

प्रश्न 2. स्वर कोकिला लता मंगेशकर का संक्षिप्त जीवन परिचय और इनके सांगीतिक योगदान पर विस्तृत वर्णन कीजिए।

प्रश्न 3 स्वर कोकिला लता मंगेशकर का जीवन परिचय और इनकी सांगीतिक उपलब्धियों पर विस्तृत प्रकाश डालें।

प्रश्न 4 स्वर कोकिला लता मंगेशकर द्वारा रचित रचनाओं एवं कृतियों का विस्तार सहित वर्णन करें।

इकाई-7
भारतीय शास्त्रीय संगीत मे प्रयुक्त तंत्री वाद्य यंत्रों की आधारभूत जानकारी

इकाई की रूपरेखा

7.1	भूमिका
7.2	उद्देश्य
7.3	भारतीय शास्त्रीय संगीत मे प्रयुक्त तंत्री वाद्य यंत्रों की आधारभूत जानकारी
	स्वयं जांच अभ्यास 1
7.4	उदाहरण के लिए तंत्री वाद्य सितार वाद्य
	स्वयं जांच अभ्यास 1
7.5	सारांश
7.6	शब्दावली
7.7	स्वयं जांच अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
7.8	संदर्भ
7.9	अनुशंसित पठन
7.10	पाठगत प्रश्न

7.1 भूमिका

संगीत (गायन तथा वादन) में, स्नातक के क्रियात्मक पाठ्यक्रम MUSA303 की यह सातवीं इकाई है। इस इकाई में संगीत, विशेष रूप से गायन और सितार वाद्य के संदर्भ में, भारतीय शास्त्रीय संगीत मे प्रयुक्त तंत्री वाद्य यंत्रों की आधारभूत जानकारी और विस्तृत अध्ययन किया गया है।

उत्तर भारतीय शास्त्रीय संगीत में रागों का प्रस्तुतिकरण विशेष रूप से होता है, जो सुनने में मधुरता से युक्त, कर्णप्रिय, वैचित्रतापूर्ण तथा आनंददायक होता है। आज के समय में शास्त्रीय संगीत के कलाकार रागों को अपने मंच प्रदर्शन के समय प्रस्तुत करते हैं। तंत्री वाद्य पर प्रस्तुति देने से पहले कलाकार को अपने वाद्य का समऊपर्ण ज्ञान होना चाहिए। ये विषय विद्यार्थी को उसके वाद्य के प्रति गयंवर्धक बनाएगा।

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् विद्यार्थी भारतीय शास्त्रीय संगीत मे प्रयुक्त तंत्री वाद्य यंत्रों की आधारभूत जानकारी विषय का परिचय और इसके रूपों के बारे मे विस्तार से अध्ययन कर पाएंगे तथा साथ ही तंत्री वाद्यों पर रागों के अभ्यास से अपने वादन मे मधुरता ला सकेंगे। विद्यार्थी इस विषय के अध्ययन के पश्चात तंत्री वाद्य के साथ सही व्यवहार करने मे समर्थ हो सकेंगे।

7.2 उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन करने के पश्चात् विद्यार्थी

- भारतीय शास्त्रीय संगीत मे प्रयुक्त तंत्री वाद्य यंत्रों की आधारभूत जानकारी विषय का अर्थ समझ सकेंगे।
- भारतीय शास्त्रीय संगीत मे प्रयुक्त तंत्री वाद्य यंत्रों की आधारभूत जानकारी विषय का अर्थ और तंत्री वाद्यों के विभिन्न प्रकारों को जान सकेंगे।

इन उद्देश्यों के माध्यम से, विद्यार्थी न केवल भारतीय शास्त्रीय संगीत मे प्रयुक्त तंत्री वाद्य यंत्रों की आधारभूत जानकारी विषय के तकनीकी पहलुओं को जान पाएंगे, बल्कि इसके गहरे सांगीतिक, सांस्कृतिक और भावनात्मक महत्व को भी समझ सकेंगे। इससे उनके संगीत के प्रति दृष्टिकोण में गहराई और समृद्धि आएगी, साथ ही मंच प्रदर्शन मे परिपक्क्वता का अनुभव भी प्राप्त होगा, जो कि उनके भविष्य में सहायक सिद्ध होगा।

7.3 भारतीय शास्त्रीय संगीत मे प्रयुक्त तंत्री वाद्य यंत्रों की आधारभूत जानकारी परिचय

ऐसे वाद्य जिनमें धातु की तारों अथवा तंतुओं का प्रयोग किया जाता है तथा जिनमें ध्वनि उत्पन्न करने के लिए उंगलियों मिज़राब या जवा का प्रयोग किया जाता है तत् वाद्य कहलाते हैं। जैसे तानपूरा, सितार, सारंगी, वायलिन, इसराज, सरादे, बैजो, गिटार, संतूर इत्यादि। इन वाद्यों को जननी वीणा मानी जाती है। वर्तमान में इन वाद्यों को तीन उपभागों में विभक्त किया जाता है। वह वाद्य जो अंगुलियों, मिजराब अथवा जवा द्वारा बजाये जाते हैं जैसे तानपूरा, सितार, वीणा, सरोद, गिटार इत्यादि।

तार वाले वाद्ययंत्र

वाद्यों के इस उपभाग को भी दो शाखाओं में विभक्त किया जाता है।

1. सारिका युक्त वाच (पर्दो सहित) जैसे सितार, वीणा, दिलरूया, गिटार।

2. जो वाद्य गज अथवा कमानी द्वारा बजाए जाते है जैसे वायलिन, सारंगी, दिलरुबा इत्यादि।

वाद्यों के इस उपभाग को भी दो शाखाओं में विभक्त किया जाता है-

1. पर्दे वाले वाद्य के आधार पर जैसे इसराज।

2. बिना पर्दे वाले वाद्य के आधार पर जैसे सारंगी, वायलिन इत्यादि।

3. तीसरा प्रकार उन वाद्यों का है जिनमें लकड़ी के दण्ड से आघात करने पर स्वरोत्पत्ति होती है। जैसे संतूर, पियानों, बैंजो इत्यादि।

तत् श्रेणी के उपरोक्त समस्त वाद्य यन्त्र स्वरोत्पत्ति में सक्षम है अतः इन वाद्यों के माध्यम से कोई स्वर रचना की जा सकती है। 20 वीं शताब्दी में तत् वाद्यों के मुख्यतः दो विभाजन देखने में आते हैं एक तत् व दूसरा वितत्। वैसे मध्यकालीन शास्त्रकारों ने भी धर्म वाले वाद्यों के लिए वितत् शब्द का प्रयोग किया है परन्तु वर्तमान में उन वाद्यों के लिए वितत् शब्द का प्रयोग होने लगा है जो वाद्य गज की सहायता अर्थात् घर्षण द्वारा स्वरोपत्ति में सक्षम है जैसे

वायलिन, सारंगी, दिलरुबा इत्यादि। विद्यार्थियों की जानकारी के लिए यह बताना आवश्यक है कि विद्वानों का बहुमत इस प्रकार के वाद्यों को वितत् की अपेक्षा गज तत् वाद्य कहना अधिक उचित एवं तर्क संगत मानता है। इस प्रकार के वाद्यों को तत् श्रेणी के उपभाग में रखना अधिक सार्थक है। वितत् का अर्थ ढका हुआ भी होता है। अवनद्ध वाद्य चर्म से ढके होने के कारण ही मध्यकालीन ग्रन्थकारों ने ताल वाद्यों के लिए अवनद्ध या आनद्ध के स्थान पर वितत् शब्द का प्रयोग किया है।

यह ठीक है कि आधुनिक समय में तंत्री वाद्यों की अधिक संख्या व विकसित वादन शैलियों को देखते हुए तत् वाच्चों का वर्गीकरण हो सकता है। प्रकार से बजने वाले वाद्य (सारिका युक्त बिना सारिका के) तथा गज से बजने वाले वाद्यों की तकनीक अलग-अलग होती है इसलिए प्रहार से बजने वाले वाद्य को तत् तथा घर्षण से बजने वाले वाह्य को गजतत् कहना अधिक उपयुक्त होगा। तन्त्री वाद्यों के वर्गीकरण को इस नीचे दी गई तालिका से सुगमता से समझा जा सकता है।

तारयुक्त वाद्ययंत्रों का वर्गीकरण

घर्षण से					
पर्दे युक्त	**परदे रहित**	**उंगली से बजाए जाने वाले वाद्य**	**मिजराब अथवा जवा से बजाए जाने वाले वाद्य**	**प्रहार/दंड के प्रहार से बजाए जाने वाले वाद्य**	**गज से बजाए जाने वाले वाद्य**
दिलरूबा	वायलिन	तानपूरा	सितार	संतूर	दिलरूबा
इसराज	सारंगी	स्वर मण्डल	सरोद	बैंजो	इसराज
सितार	सरोद		वीणा		वायलिन
सुरबहार	सुरसिंगार				सारंगी
वीणा					

साधारणतया ध्वनि उत्पत्ति के माध्यम के लिए (मिजराब, जवा अथवा गज आदि) दाँय हाथ का और स्वर उत्पत्ति के लिए बॉए हाथ का प्रयोग करते हैं किन्तु संतूर वाद्य में दोनों ही हाथों से स्वरोत्पत्ति की जाती है। ऐसे वाद्य जिनमें धातु की

तारों अथवा तंतुओं का प्रयोग किया जाता है तथा जिनमें ध्वनि उत्पन्न करने के लिए उंगलियों मिज़राब या जवा का प्रयोग किया जाता है तत् वाद्य कहलाते हैं। जैसे तानपूरा, सितार, सारंगी, वायलिन, इसराज, सरादे, बैजो, गिटार, संतूर इत्यादि। इन वाद्यों को जननी वीणा मानी जाती है। वर्तमान में इन वाद्यों को तीन उपभागों में विभक्त किया जाता है। वह वाद्य जो अंगुलियों, मिजराब अथवा जवा द्वारा बजाये जाते हैं जैसे तानपूरा, सितार, वीणा, सरोद, गिटार इत्यादि।

स्वयं मूल्यांकन प्रश्न

7.1 उंगली से बजाया जाने वाला तंत्री वाद्य कौन सा है?

1) सितार

2) तानपूरा

3) वॉयलन

4) कोई नहीं

7.2 मिजराब से बजाया जाने वाला तंत्री वाद्य कौन सा है?

1) सितार

2) तानपूरा

3) वॉयलन

4) कोई नहीं

7.3 गज से बजाया जाने वाला तंत्री वाद्य कौन सा है?

1) सितार

2) तानपूरा

3) वॉयलन

4) कोई नहीं

7.4 उदाहरण के लिए तंत्री वाद्य सितार वाद्य

सितार के आविष्कार के सम्बन्ध में अभी तक कोई निश्चित मत नहीं है। बहुत-से लोगों का विचार है कि चौदहवीं शताब्दी में अमरी खुसरो ने वीणा के आधार पर 'सहतार' नामक वाद्य का आविष्कार किया। 'सहतार' एक फारसी शब्द है जिसका अर्थ होता है, तीन तार का वाद्य । 'सहतार' ही बिगड़कर 'सितार' कहलाने लगा । प्रारम्भ में इस वाद्य में कुल तीन तार होते थे, परन्तु परिवर्तन के अनुसार तीन के स्थान पर अब इसमें सात तार लगाये जाने लगे हैं।

तूम्बा कद्दू अथवा लौकी का बना गोलाकार भाग तूम्बा कहलाता है

तबली- तूम्बे के ऊपर उसे ढँकने के लिए पतली लकड़ी का जो ढक्कन होता है, जिस पर घुरच आदि रखे जाते हैं, तबली कहलाती है।

घुरच- तबली के ऊपर लकड़ी अथवा हड्डी की एक चौकी होती है जिस पर सितार के तार रखे रहते हैं, घुरच (Bridge) कहलाती है।

कील या लँगोट- तूम्बे के सिरे पर सितार के तारों को बाँधने का जो प्रबन्ध होता है, उसमें अधिकतर लकड़ी अथवा हड्डी की कील लगाते हैं जिसमें तार बाँधे जाते हैं। इस कील को लँगोट, मोंगरा अथवा कील कहते हैं।

डाँड- तूम्बे के बाद जो लम्बा भाग सितार का होता है जिसमें खूंटियाँ आदि होती हैं, वह डाँड कहलाता है। यह लकड़ी का खोखला बना होता है। तानपूरे का डाँड सितार की डाँड से अधिक मोटा तथा गोलाकार होता है।

गुलू अथवा गुल- जिस स्थान पर तूम्बा और डाँड जुड़ते हैं उसे गुल अथवा गुलू कहते हैं।

तारगहन- खूँटियों के पास हड्डी या हाथी-दाँत की दो पट्टियाँ होती हैं। इसमें से जिसमें तार पिरोये जाते हैं तथा जिसमें तारों को पिरोने के लिए छिद्र होते हैं, उसे तारगहन कहते हैं।

अटी- तारगहन के बाद दूसरी पट्टी जिस पर तार रखे जाते हैं, वह अटी कहलाती है।

परदे- डाँड के ऊपर पीतल अथवा लोहे के परदे ताँत या धागे से बँधे रहते हैं, जिन पर अँगुली रखने से विभिन्न स्वर उत्पन्न किये जाते हैं। इनको 'परदे', 'सुन्दरी' अथवा 'कट' आदि नामों से पुकारते हैं। इनकी संख्या १६ से लेकर १९ तक होती है।

मनका- सितार के पहले तार में लँगोट (जहाँ तार बाँधे जाते है) और घुरच (Bridge) के बीच जो मोती पड़ी रहती है तथा जिसमें तार को स्वर से मिलाने में सहायता मिलती है, उसे मनका या गुरिया कहते हैं।

खूंटियाँ- सितार में लकड़ी की बनी सात खूंटियाँ होती हैं जिनसे तार कसे अथवा ढीले किये जाते हैं। तरब के सितार में १२ खूँटियाँ और होती हैं।

सितार में सात स्वर होते हैं, जो इस प्रकार हैं-

(१) सितार का पहला तार फौलादी लोहे का बना होता है। इसे बाज का तार भी कहते हैं तथा मन्द्र सप्तक के मध्यम स्वर से इसे मिलाया जाता है। सितार-वादन में सबसे अधिक प्रयोग इसी तार का होता है, क्योंकि मन्द्र सप्तक के मध्य स्वर से तार सप्तक तक के स्वरों को इसी तार द्वारा निकालते हैं।

(२) सितार का दूसरा तार पीतल का बना होता है और जोड़ी का तार कहलाता है। इसे मन्द्र सप्तक के षड्ज स्वर से मिलाते हैं।

(३) दूसरे तार की तरह सितार का तीसरा तार भी पीतल का बना होता है। इसे भी जोड़ी का तार कहते हैं तथा मन्द्र सप्तक के षड्ज स्वर से मिलाते हैं। क्योंकि ये तार मन्द्र सप्तक के षड्ज से मिलाये जाते हैं, इसलिए इन्हें जोड़ी के तार कहकर पुकारते हैं। सितार मिलाने के लिए सबसे पहले इन दो तारों को मिलाया जाता है, फिर बाद में अन्य तार मिलाये जाते हैं।

(४) सितार का चौथा तार लोहे का बना होता है जो पंचम का तार कहलाता है। इसे मन्द्र सप्तक के पंचम स्वर से मिलाया जाता है।

(५) सितार का पाँचवाँ तार पीतल का बना होता है परन्तु अन्य तारों से यह कुछ मोटा होता है। इसे अति मन्द्र सप्तक के पंचम स्वर से मिलाया जाता है। इसको भी 'पंचम का तार' अथवा 'लर्ज का तार' कहते हैं।

(६) सितार का छठा तार पतले फौलादी लोहे का बना होता है तथा 'चिकारी' अथवा 'पपैया का तार' कहलाता है। इसे मध्य सप्तक के षड्ज से मिलाया जाता है।

(७) सितार का सातवाँ तार भी पतले फौलादी लोहे का बना होता है। इसको भी 'चिकारी का तार' अथवा 'पपैया का तार' कहकर पुकारते हैं। इस तार को सप्तक के षड्ज स्वर से मिलाया जाता है। कुछ लोग इसे मध्य सप्तक के पंचम स्वर से भी मिलाते हैं, परन्तु तार सप्तक के षड्ज से मिलाने का अधिक प्रचार है।

सितार को मिलाते समय पहले जोड़ी के तारों को मिलाना चाहिए। इसके बाद बाज के तार को मिलाना चाहिए। बाज के तार के बाद पंचम के दोनों तारों को एक के बाद एक करके मिलाना चाहिए। इन दोनों तारों को मिलाने में इस बात की सावधानी रखनी चाहिए कि इनमें एक सप्तक का अन्तर होता है अर्थात् चौथा तार मन्द्र सप्तक के पंचम से मिलाया जाता है तथा पाँचवाँ पीतल का तार अतिमन्द्र सप्तक के पंचम स्वर से मिलाया जाता है। बाद में छठे और सातवें तार को क्रमशः उनके स्वरों में सावधानी से मिलाना चाहिए। ये दोनों तार अधिकतर झाला बजाने के काम आते हैं।

मिजराब-सितार बजाने के लिए लोहे के तार अथवा पीतल के मोटे तार का बना एक यन्त्र होता है जो सीधे हाथ की तर्जनी उँगली में पहना जाता है। सितार बजाने के लिए इस यन्त्र को उँगली में पहनकर तार पर प्रहार करते हैं, जिससे तार में कम्पन होता है और कम्पन से ध्वनि उत्पन्न होती है।

सितार

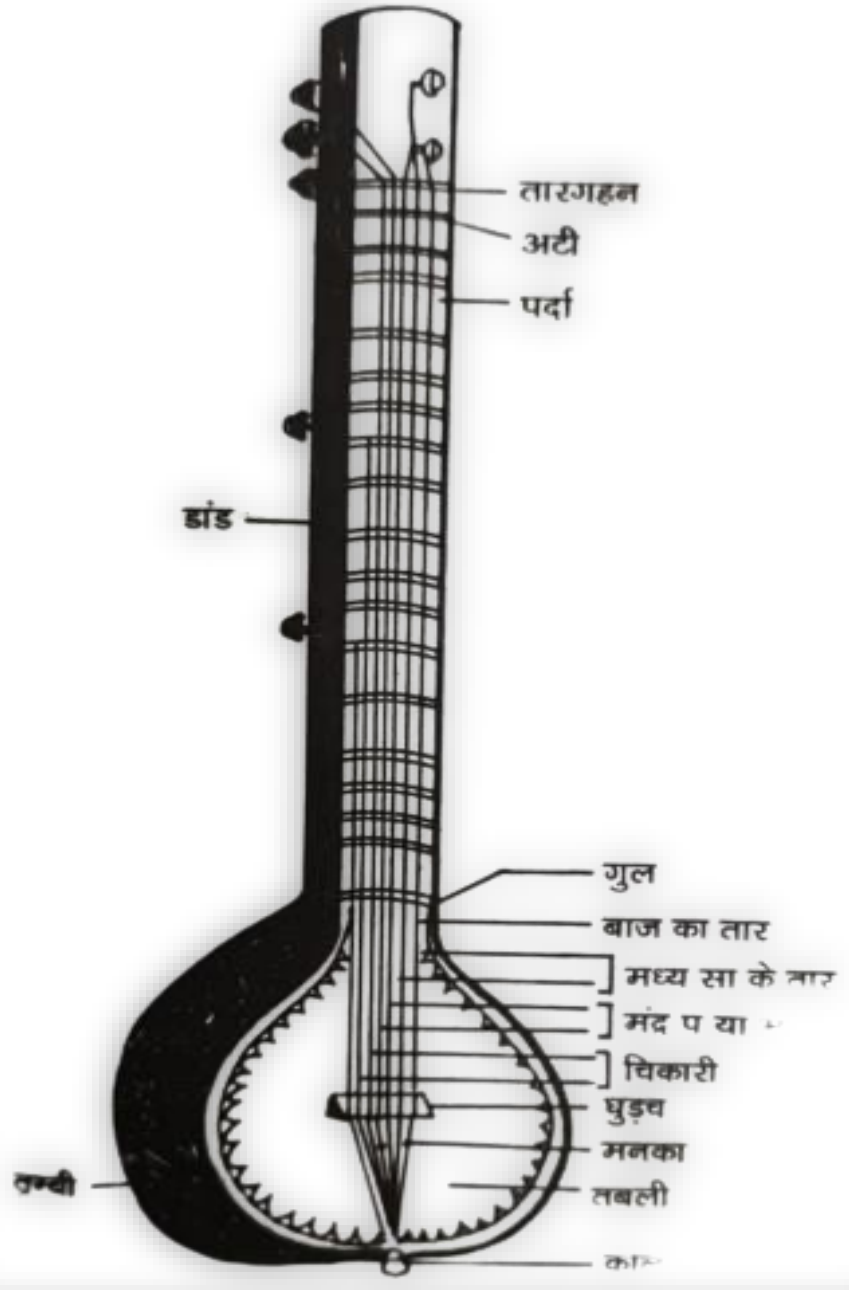

मिजराब में तार पर प्रहार दो प्रकार से होता है। एक जब उँगली को तार पर पटकते हुए अपनी ओर लाना होता है जो आकर्ष प्रहार कहलाता है। इसमें 'दा' का बोल निकलता है। दूसरा प्रहार इसका उल्टा होता है, अर्थात् तार पर मिजराब का प्रहार करके उँगली को अपनी ओर से ले जाना होता है। इसे अपकर्ष प्रहार कहते हैं और 'ड़' का बोल निकलता है।

कहने का अर्थ यह हुआ कि सतार के तार को बजाने के लिए उँगली दो प्रकार से चलायी जाती है- एक ओर तो उँगली को अपनी ओर लाते हैं जिससे 'दा' का बोल निकलता है तथा दूसरे जब उँगली को अपनी ओर से दूसरी ओर ले जाते हैं- यह पहले का उल्टा होता है और इससे 'ड़' का बोल निकलता है। इन्हीं दोनों प्रहारों को क्रमशः 'आकर्ष' और 'अपकर्ष' प्रहार कहकर पुकारते हैं।

सितार में यही 'दा' और 'ड़ा' मुख्य दो बोल हैं। इन्हीं दोनों को मिलाने से 'दिड़' बनता है अर्थात् 'दा' और 'ड़ा' बोलों को मिलाने से एक तीसरा बोल 'दिड़' बनता है। बहुत-से लोग 'ड़ा' के बोल को 'रा' कहकर पुकारते हैं और इस प्रकार 'दाड़ा' की जगह 'दारा' कहते हैं।

स्वयं मूल्यांकन प्रश्न

7.4 सितार कैसा वाद्य है?

1) तत् वाद्य

2) सुषिर वाद्य

3) घन वाद्य

4) अवनद्ध वाद्य

7.5 सितार मे मुख्य कितनी तारें होती है?

1) 1 या 2

2) 3 या 5

3) 5 या 6

4) 6 या 7

7.6 सितार मे तरब की तारें कितनी होती है?

1) 11 से 13

2) 14 से 18

3) 15 से 17

4) कोई नहीं

7.7 सितार का पहला तार कौन सा होता है?

1) फौलादी लोहे का तार

2) चिकारी का तार

3) 7बाज का तार

4) अन्य

7.8 सितार का दूसरा तार कौन सा होता है?

1) जोड़े का तार

2) चिकारी का तार

3) फौलादी लोहे का तार

4) अन्य

7.9 गायकी अंग वाले सितार मे चौथा तार और पाँचवाँ खूंटी वाला तार कौन सा होता है?

1) स्टील का

2) गांधार निषाद का

3) लोहे का

4) गांधार पंचम का

7.10 सितार क छठी और सातवीं खूटी वाले तार किस नाम से जाने जाते है?

1) परज़ का तार

2) चिकारी का तार

3) लरज़ का तार

4) बाज का तार

7.11 सितार के जिस भाग से तारें कसी या ढीली की जाती है, उसे .... कहते हैं।

1) परदा

2) अट्टी

3) खूंटी

4) अन्य

7.12 सितार के जिस भाग पर सारी तारें एकसाथ बंधी जाती है, उसे .... कहते हैं।

1) परदा

2) अट्टी

3) खूंटी

4) लंगोट

7.5 सारांश

भारतीय शास्त्रीय संगीत मे प्रयुक्त तंत्री वाद्य यंत्रों की आधारभूत जानकारी विषय भारतीय शास्त्रीय संगीत का एक महत्वपूर्ण विषय है, जिसके बिना अच्छे संगीत की कल्पना भी नहीं की जा सकती। तंत्री वाद्य पर निरंतर अभ्यास से शास्त्रीय संगीत मे तैयारी और परिपक्क्वता आती है, जो श्रोताओं को अनायास ही मंत्रमुग्ध करती हैं। शास्त्रीय संगीत मे तंत्री वाद्य पर अभ्यास से संगीतज्ञ के वादन मे रंजकता और परिपक्क्वता आती है।

7.6 शब्दावली

- अलंकार (Alankar): जिस प्रकार एक स्त्री सुन्दर दिखने के लिए आभूषणों से खुद को सजाती है वही स्थान संगीत मे अलंकार का है।
- राग (Raga): संगीत का एक विशेष संरचनात्मक पद्धति, जो स्वरों के विशेष क्रम का उपयोग करके भावनात्मक और मनोरंजन को व्यक्त करता है।

- ताल (Taal): संगीत में अंकित समय स्तर को ताल कहा जाता है, जो गायन या वादन के साथ समय की गणना करने में मदद करता है।
- लय (Lay): संगीत में गति या चलन को लय कहा जाता है, जो ताल की गति को निर्दिष्ट करता है।
- श्रुति (Shruti): संगीत में सबसे छोटे स्वर को श्रुति कहा जाता है, जो स्वर स्थान पर किसी भी विस्तार में पाया जा सकता है।
- स्वर (Swar): संगीत में विभिन्न ऊर्जाओं को स्थान देने वाले तारों को स्वर कहा जाता है, जो संगीत के मूल भाग हैं।
- मेलोडी (Melody): संगीत में स्वरों के विशेष क्रम का एक संरचित और आकर्षक संयोजन, जिससे एक गाना या संगीत कविता का निर्माण होता है।

7.7 स्वयं जांच अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

आत्म-मूल्यांकन प्रश्न 1

7.1) उत्तर: 2

7.2) उत्तर: 1

7.3) उत्तर: 3

आत्म-मूल्यांकन प्रश्न 2

7.4) उत्तर: 2

7.5) उत्तर: 4

7.6) उत्तर: 1

7.7) उत्तर: 3

7.8) उत्तर- 1

7.9) उत्तर: 4

7.10) उत्तर: 2

7.11) उत्तर: 3

7.12) उत्तर: 4

7.8 संदर्भ

भातखंडे, विष्णुनारायण. (1970). कर्मिक पुस्तक मलिका. खंड 1-6, संगीत कार्यालय हाथरस।

श्रीवास्तव, हरिश्चद्र. (2015). राग परिचय (भाग 1), संगीत सदन प्रकाशन, इलाहबाद।

मृत्युंजय, डॉ. शर्मा. (2000). संगीत मैनुअल. ए.जी. पब्लिकेशन, दिल्ली।

श्रीवास्तव, हरिश्चद्र. (2010). राग परिचय (भाग 4), संगीत सदन प्रकाशन, इलाहबाद।

प्रो. केशव शर्मा द्वारा साक्षात्कार से प्राप्त जानकारी।

डॉ. मृत्युंजय शर्मा द्वारा साक्षात्कार से प्राप्त जानकारी।

डॉ. निर्मल सिंह द्वारा साक्षात्कार से प्राप्त जानकारी।

7.89अनुशंसित पठन

श्रीवास्तव, हरिश्चद्र. (2015). राग परिचय (भाग 2), संगीत सदन प्रकाशन, इलाहबाद।

श्रीवास्तव, हरिश्चद्र. (1998). मधुर स्वरलिपि संग्रह. संगीत सदन प्रकाशन, इलाहबाद।

7.10 पाठगत प्रश्न

प्रश्न 1. भारतीय शास्त्रीय संगीत मे प्रयुक्त तंत्री वाद्य यंत्रों की आधारभूत जानकारी विषय पर विस्तार से प्रकाश डालें।

प्रश्न 2. भारतीय शास्त्रीय संगीत मे प्रयुक्त तंत्री वाद्य यंत्रों की आधारभूत जानकारी विषय पर तंत्री वाद्यों के प्रकारों सहित विस्तार से प्रकाश डालें।

इकाई-8
ग्राम, मुच्छना व जाति और मार्गी तथा देशी संगीत

इकाई की रूपरेखा

8.1	भूमिका
8.2	उद्देश्य
8.3	ग्राम, मुच्छना व जाति परिचय
	स्वयं जांच अभ्यास 1
8.4	मार्गी तथा देशी संगीत परिचय
	स्वयं जांच अभ्यास 2
8.5	सारांश
8.6	शब्दावली
8.7	स्वयं जांच अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
8.8	संदर्भ
8.9	अनुशंसित पठन
8.10	पाठगत प्रश्न

8.1 भूमिका

संगीत (गायन तथा वादन) में, स्नातक के क्रियात्मक पाठ्यक्रम MUSA303 की यह आठवीं इकाई है। इस इकाई में संगीत, विशेष रूप से गायन और सितार वाद्य के संदर्भ में, ग्राम, मुर्च्छना व जाति परिचय और मार्गी तथा देशी संगीत परिचय

का अर्थ परिचय और विस्तृत अध्ययन किया गया है।

उत्तर भारतीय शास्त्रीय संगीत में रागों का प्रस्तुतिकरण विशेष रूप से होता है, जो सुनने में मधुरता से युक्त, कर्णप्रिय, वैचित्रतापूर्ण तथा आनंददायक होता है। आज के समय में शास्त्रीय संगीत के कलाकार रागों को अपने मंच प्रदर्शन के समय प्रस्तुत करते हैं। रागों में मधुरता और वैचित्र्य लाने के लिए इन विषयों का अभ्यास किया जाता है। मूर्छना के अभ्यास से गायक की आवाज मे परिपक्क्वता और वादक के वादन मे मधुरता, गांभीर्य और तैयारी साफ झलकती है।

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् विद्यार्थी ग्राम, मुर्च्छना व जाति परिचय और मार्गी तथा देशी संगीत का अर्थ परिभाषा और गमक के प्रकार और रूपों के बारे मे विस्तार से अध्ययन कर पाएंगे तथा साथ ही सितार वादन पर गमक के अभ्यास से अपने वादन मे मधुरता ला सकेंगे। आश्रय राग के अध्ययन से विद्यार्थी रागों के बीच के अंतर को समझ पाएगा।

8.2 उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन करने के पश्चात् विद्यार्थी

- ग्राम, मुर्च्छना व जाति और मार्गी तथा देशी संगीत विषय का अर्थ समझ सकेंगे।
- ग्राम, मुर्च्छना व जाति के विभिन्न प्रकारों को समझ सकेंगे।
- मार्गी तथा देशी संगीत विषय का अर्थ समझ सकेंगे।
- मार्गी तथा देशी संगीत के विभिन्न प्रकारों को विस्तार से समझ सकेंगे।

इन उद्देश्यों के माध्यम से, विद्यार्थी न केवल ग्राम, मुर्च्छना व जाति और मार्गी तथा देशी संगीत के तकनीकी पहलुओं को जान पाएंगे, बल्कि इसके गहरे सांगीतिक, सांस्कृतिक और भावनात्मक महत्व को भी समझ सकेंगे। इससे उनके

संगीत के प्रति दृष्टिकोण में गहराई और समृद्धि आएगी, साथ ही मंच प्रदर्शन मे परिपक्क्वता का अनुभव भी प्राप्त होगा, जो कि उनके भविष्य में सहायक सिद्ध होगा।

8.3 ग्राम, मुर्च्छना व जाति परिचय

जिस प्रकार एक परिवार गांव में लोग मिलजुल कर रहते हैं उसी प्रकार नियमित श्रुत्यांतरों पर स्थित नियत स्वरों के समूह को 'ग्राम' कहते हैं।

ग्राम' शब्द की व्याख्या सर्वप्रथम मतंग ने की है उनके अनुसार समूहवाचिनों ग्रामों स्वरश्रुतियादि संयुतों। अर्थात् एक विशेष प्रकार की स्वर श्रुति व्यवस्था में जितने स्वर समूह में आते हैं उसे ग्राम में समाविष्ट किया जाता है। भरत के अनुसार "स्वराणां समूहों ग्राम इत्युच्यते"। अर्थात् स्वरों का समूह ही ग्राम है। शांरगदेव, दामोदर, अहोबल आदि ग्रन्थकारों ने भी ग्राम का अर्थ उपरोक्त ही माना है। ग्रामों की कुल संख्या तीन मानी गई है।

1 षड्ज ग्राम 2 मध्यम ग्राम 3 गान्धार ग्राम।

व्यवहार में दो ग्रामों को ग्रहण किया गया है षड्ज ग्राम और मध्यम ग्राम। एक ग्राम में बाईस श्रुतियों का प्रयोजन है। षड्ज ग्राम में श्रुतियों का क्रम 4-3-2-4-4-3-2 इस प्रकार है जिसके अनुसार चौथी श्रुति पर सा, सातवीं पर रे, नौंवी पर ग, तेरहवीं पर म, सताहरवी पर प. बीसवीं पर ध तथा बाइसवीं पर नि स्थापित है।

श्रुतियाँ	1	2	3	4	5	6	7	8	9	10	11	12	13	14	15	16	17	18	19	20	21	22
स्वर				सा			रे		ग				म				प			ध		नि

ग्राममध्यम ग्राम में श्रुतियों का क्रम इस प्रकार है 4-3-2-4-3-4-2 अर्थात् मध्यम ग्राम में पंचम सताहरवीं श्रुति पर न होकर सोलहवीं श्रुति पर स्थित रहता है। मध्यम ग्राम में षड्ज मध्यम संवाद होता है।

श्रुतियाँ	1	2	3	4	5	6	7	8	9	10	11	12	13	14	15	16	17	18	19	20	21	22
स्वर				सा			रे		ग				म			प				ध		नि

मूर्छना

मूर्छना शब्द 'मूर्च्छ धातु से बना है। जिसका अर्थ है 'चमकना' अथवा 'उभरना'। संगीत के क्षेत्र में मूर्छना का सामान्य अर्थ है सात स्वरों का कम से आरोहवरोह करना। मूर्छना ग्राम पर आश्रित है। ग्राम प्राप्ति के बाद ही मूर्छनाएं बनाई गई है ग्राम के किसी भी स्वर को स्वरित मानकर ग्राम के ही स्वरों पर क्रमिक आरोहवरोह करने को मूर्छना कहते हैं।

भरत के अनुसार क्रमयुक्त होने पर सात स्वर मूर्छना कहलाते हैं। शारंगदेव के अनुसार सात स्वरों का आरोहवरोह मूर्च्छना है और वे दो ग्रामों में सात-सात हैं।

प्राचीन संगीत पद्धति में प्रत्येक ग्राम से कुल सात मूर्छनाएं बनती थी क्योंकि ग्राम में सात स्वर होते थे ग्राम कुल तीन थे। इस प्रकार तीन ग्रामों से 21 मूर्छनाएं बनती थी। षड्ज से क्रमयुक्त सात स्वरों का आरोह एवं अवरोह करें तो यह षड्ज की मूर्छना कहलाएगी जैसे

सा रे ग़ म प ध नि़ । नि़ ध प म ग़ रे सा।

षड़ज ग्राम की दूसरी मूर्छना मन्द्र सप्तक के निशाद द्वारा प्रारम्भ की जाती है और शेष पाँच मूर्छनाएँ क्रमशः मन्द्र सप्तक के अन्य स्वरों से प्रारम्भ की जाती हैं।

इसी प्रकार मध्यम ग्राम में पहली मूर्च्छना मध्यम से आरम्भ की जाती थी। दूसरी मूर्छना गन्धार स्वर और अन्य ऋषभ आदि नीचे के स्वरों से क्रमशः आरम्भ की जाती थी। गन्धार ग्राम को पहली मूर्च्छना निषाद स्वर से आरम्भ होती थी। मूर्छना चार प्रकार की कही गई है 1. सम्पूर्णा 2. षाडविता 3. औड़विता 4. साधारणीकृता ।

सात स्वरों से गायी जाने वाली सम्पूर्णा छः से षाड़विता पांच से औडविता तथा काकली अन्तर स्वरों से युक्त को साधारणी कहते थे।

मूर्छना का प्रचार प्राचीन समय में तो अवश्य था परन्तु मध्यकाल में इसके अर्थ में कुछ परिवर्तन हो गया। मध्यकाल में मूर्छना का अर्थ किसी भी राग के स्वर विस्तार की पहली तान समझा जाने लगा। धीरे-धीरे मूर्छना का अर्थ आरोहावरोह समझा जाने लगा जो हमेशा षड्ज स्वर से शुरू किया जाता था।

षड्ज ग्राम की मूर्छनाएं

ये मूच्छन क्रमशः षड्जा, निषध, धैवत, पंचम, मध्यम, गांधार और ऋषभ से शुरू होते हैं।

मूर्च्छनाओ के नाम

1. उत्तरमन्द्रा- सा रे ग म प ध नी

2. रजनी- ऩि सा रे ग म प ध

3. उत्तरायता- ध़ ऩि सा रे ग म प

4. शुद्ध षड्जा- प़ ध़ ऩि सा रे ग म

5.मत्सरीकृता- म़ प़ ध़ ऩि रे ग

6. अश्वक्रान्ता- ग़ म़ प़ ध़ ऩि सा रे

7. अभिरूद्गता-.रे ग़ म प़ ध़ ऩि सा

मध्यम ग्राम की मूर्छनाएं

ये मूर्छनाएं क्रमशः मध्यम गांधार, ऋषभ, षडज, निषध, धैवत, पंचम से आरम्भ होती है।

मूर्छनाओं के नाम

1. सौवीरी- मपधनिसांरेंगं

2. हरिणाश्वा- गमपधनिसां रें

3. कलोपनता- रेगमपधनिसां

4. शुद्ध मध्यमा- सारेगामापाधानी

5. मार्गी- निसारेगमपध

6. पौरवी-धनिसारेगमप

7. हृष्यका- पधनिसारेगम

मूर्छनाओं के लक्षण इस प्रकार है :-

1. मूर्च्छना ग्राम पर आधारित है। ग्राम के स्वरों को आरोहवरोह क्रम से करने पर मूर्छना बनती है।

2. मूर्छना के स्वर क्रमानुसार होते हैं।

3. मूर्छना में सात स्वर होना आवश्यक है।

4. मूर्च्छना को हर बार एक नए स्वर से प्रारम्भ करके एक नए ग्राम की प्राप्ति होती है।

5. मूर्छना जिस स्वर से शुरू होती है उसी स्वर पर समाप्त होती है।

6. मूर्छनाओं से तानों की उत्पति की जाती है।

7. मूर्छनाओं से स्वरों की शुद्ध और विकृत अवस्था का ज्ञान होता है।

3.3 जाति

मूर्छना के पश्चात जाति का निरूपण करना ही वास्तव मे क्रमबद्धता है।

मतंग मुनि के अनुसार :-

1 श्रवण, ग्रह, स्वर आदि के समूह से जाति का जन्म होता है। अर्थात् धर्मग्रन्थ। जो ग्रह, स्वर आदि के समूह से उत्पन्न होते हैं उन्हें जाति कहते हैं।

2. यस्माज्जायते रसप्रतीतिरासभ्यते इति जातयः। अर्थात् जिससे रस की उत्पति अथवा आरम्भ हो उसे जाति कहते हैं।

मूर्छना और जाति के अन्तर पर दृष्टि डालें तो कहा जा सकता है कि 'मूर्छना' केवल स्वरों का समूह है और जाति उसे कहना चाहिए जिसमें राग रस की निष्पति हो। उदाहरणार्थ सारेगमपधनिसां, सांनिध पमगरेसा। यह मूर्छना अपने आप में रस की अभिव्यंजना करने में असमर्थ है, जब तक कि इसमें जाति राग के लक्षणों, ग्रह, अंश, षाडव, औड़व, न्यास, उपन्यास, अल्पत्व तथा बहुत्व आदि का यथास्थान समावेश नहीं होता।

भरत पद्धति में जाति का वही स्थान है, जो आधुनिक पद्धति में राग का। भरत काल में जाति गायन था और जातियां 18 थीं। आचार्य बृहस्पति द्वारा भरत का संगीत सिद्धान्त नामक पुस्तक में जाति की परिभाषा इस प्रकार दी है- रंजन और अदृष्ट अभ्युदय को जन्म देते हुए विशिष्ट स्वर ही विशेष प्रकार के सन्निवेश से युक्त होने पर जाति कहलाते हैं।

जाति के लक्षण

भरत ने जाति के दस लक्षण माने हैं: ग्रह, अंश, न्यास, अपन्यास, अल्पत्व, बहुतत्व, षडत्व, औदत्व, मंद्र, तार।

शांरागदेव ने जाति की तीन और विशेषताएं जोड़ीं, अर्थात्, संन्यास, विन्यास और अंतमिरगा। जातियाँ 18 मानी जाती हैं। षाड़जी, आर्षभी , धैवती, नैषादि, षडजोदिच्यवती, षड्जकौशिकी, षडजामध्यमा, गांधारी, मध्यमा, पंचमी, रक्ता-गांधारी, गांधारोदिच्यवा, गांधारपंचमी, मध्यमोदिच्यवा, नंदयंती, कर्मारवी, आंध्री और कौशिकी। इनमें से पहली सात जातियाँ षडज ग्रामों से और शेष 11 जातियाँ मध्यम ग्रामों से उत्पन्न मानी जाती हैं।

जाति के दस लक्षणों का वर्णन इस प्रकार है-

1. ग्रह: जिस स्वर से जाति गायन प्रारम्भ किया जाता था उसे 'ग्रह' स्वर कहते थे। अंश स्वर ही ग्रह स्वर होते थे। उदाहरण के लिए नन्दयन्ती में अंश स्वर पंचम है इसलिए इनमें पंचम ही ग्रह स्वर होगा। जाति में एक से अधिक अंश स्वर हो सकते थे। क्योंकि अंश स्वर 63 माने गए हैं अतः ग्रह स्वरों की कुल संख्या भी 63 है।

2. अंश :- जाति के प्रमुख स्वर अंश कहलाते थे। आजकल किसी राग के प्रमुख स्वर को वादी कहते हैं। किसी राग में वादी स्वर एक होता है। किन्तु जाति में एक से अधिक अंश स्वर होते थे। उदाहरण के लिए षाड्जी में पांच अंशं स्वर थे सा, ग, म, प और ध। आर्षर्मी में तीन अंश स्वर थे रिषभ, धैवत, और निषाद। गान्धारी में पांच अंश स्वर थे सा, ग, म, प. नी। इस प्रकार कुल मिलाकर 63 अंश स्वर माने जाते थे।

3. न्यास - जिस स्वर पर कोई गीत या रचना समाप्त होती थी उसे न्यास स्वर कहते थे। एक जाति में एक से अधिक न्यास स्वर हो सकते थे और एक स्वर कई जातियों में न्यास स्वर हो सकता था। उदाहरणार्थ षड्ज मध्यमा में सा और म दोनों पर न्यास किया जाता था कुल 21 न्यास स्वर थे।

4. अपन्यास :- जिस स्वर पर गीत या वाद्य रचना का मध्य भाग समाप्त होता था अपन्यास स्वर कहलाता था। एक जाति में एक से अधिक अपन्यास स्वर हो सकते थे और एक स्वर कई जातियों में अपन्यास स्वर हो सकता था। जैसे निषाद स्वर आठ जातियों में और अन्य स्वर ग्यारह जातियों में अपन्यास माना जाता था।

5. अलपत्व- जिन स्वरों का प्रयोग किसी जाति में अल्प होता था उनका स्थान अलपत्व माना जाता था। अल्पत्व के दो प्रकार माने जाते थे

1 लंघन और 2 अनाम्यास।

6. बहुत्व:- जाति में जिस स्वर का प्रयोग बहुत होता है उसे बहुत्व कहते हैं। बहुत्व के भी दो प्रकार माने जाते थे। अलंघन और अभ्यास।

7. पाड़त्व-जिस जाति में केवल छः स्वरों का प्रयोग किया जाता था उसे पाड़त्व कहते थे। 18 जातियों में से 4 सम्पूर्ण जातियों के अतिरिक्त 14 जातियों का षाड़वीकरण होता था। 14 जातियों के अंश स्वरों के आधार पर षाड़वीक जातियां 47 कही जाती है।

8. औड़त्व: जिस जाति में केवल पांच स्वरों का प्रयोग किया जाता था उसे औड़त्य कहते थे। औड़त्व की अवस्था 10 जातियों में से हो सकती है। इन जातियों के अंश स्वरों का योग 42 है इनमें से 12 स्वर, जो औड़त्व के शत्रु माने जाते हैं घटा देने से शेष अंश स्वरों की संख्या 30 रह जाती है।

9. मन्द्र- प्रत्येक जाति की एक निश्चित सीमा होती है। जिसके अन्दर गायक या वादक को रहना पड़ता था। मन्द्र स्थान में अंश, न्यास तथा अपन्यास तक जा सकते थे। जाति के स्वरों का मन्द्र सप्तक में प्रयोग करना मन्द्रत्व कहलाता है।

10. तार- तार स्थान में अंश से चौथे, पांचवे या सातवें स्वर तक जा सकते थे। भरत ने अति तार स्थान का प्रयोग नहीं किया है। जाति के स्वरों का तार सप्तक में प्रयोग करना तारत्व कहलाता है।

शारंगदेव ने 10 लक्षणों के अलावा तीन और लक्षण माने हैं।

1. सन्यास:- जिस स्वर में गीत का प्रथम हिस्सा समाप्त होता था उसका सम्वादी या अनुवादी स्वर सन्यास कहलाता था।

विन्यास :- गीत का अन्तिम स्वर विन्यास स्वर कहलाता था।

3. अन्तरमार्ग :- जाति के 10 लक्षणों का पालन करते हुए तिरोभाव-आविर्भाव दिखाना अन्तरमार्ग कहलाता है।

स्वरों से गाम और ग्राम से मूच्छनाओं की निष्पति होती है। संगीत में प्रयुक्त होने वाले तीन गामों में से दो ग्रामों का प्रयोग संगीत में होता रहा है। इन्ही गामों पर श्रुत्यान्तारों के आधार पर मूर्छनाओं को प्राप्त किया जाता है। वर्तमान में भी मूर्छनाओं कों स्वरों व थाटों पर प्रयोग करके अलग-अलग रागों की अवधारणा की जाती है। इस प्रकार संगीत कि प्रत्येक विद्यार्थियों को स्वर, श्रुति, ग्राम व मूर्छनाओं को सही से समझ कर व्यवहारिक रूप में प्रयोग करना चाहिए।

स्वयं मूल्यांकन प्रश्न

8.1 इनमे से कौन सा ग्राम है

1) षड़ज ग्राम

2) ध्रुपद ग्राम

3) रंग ग्राम

4) कोई नहीं

8.2 इनमे से कौन सा ग्राम है?

1) नंदा

2) ध्रुपद ग्राम

3) मध्यम ग्राम

4) कोई नहीं

8.3 इनमे से कौन सा ग्राम है?

1) विशाला ग्राम

2) गंधार ग्राम

3) पूर्वी ग्राम

4) कोई नहीं

8.4 इनमे से कौन सी मूर्छना है?

1) नंदा

2) ध्रुपद ग्राम

3) मध्यम ग्राम

4) कोई नहीं

8.5 इनमे से कौन सी मूर्छना है?

1) मदंती

2) ध्रुपद ग्राम

3) विशाला

4) कोई नहीं

8.6 इनमे से कौन सी मूर्छना है?

1) मदंती

2) हरिणाश्वा

3) मंद्र

4) कोई नहीं

8.7 इनमे से कौन सी मूर्छना है?

1) मदंती

2) तार

3) सौवेरी

4) कोई नहीं

8.4 मार्गी तथा देशी संगीत परिचय

प्राचीनकाल में संगीतज्ञों ने शास्त्रीय संगीत को दो भागों में विभाजित किया था।

(१) मार्गी अथवा मार्ग संगीत।

(२) देशी संगीत अथवा गान।

मार्गी अथवा मार्ग संगीत- अति प्राचीनकाल में ऋषियों ने जब यह देखा कि संगीत में मन को एकाग्र करने की एक अत्यन्त प्रभावशाली शक्ति है तभी से वे इस कला का प्रयोग परमेश्वर की आराधना के लिए करने लगे। संगीत परमेश्वर-प्राप्ति का प्रमुख साधन माना जाने लगा। लोगों का विचार था कि 'ॐ' शब्द ही नाद ब्रह्म है। संगीत का उद्देश्य निश्चित करने के बाद संगीतज्ञों ने इसे कड़े नियमों से बाँधने का प्रयत्न किया। भरत मुनि ने इस नियमबद्ध संगीत को, जो ईश्वर-प्राप्ति का साधन माना जाता है, मार्गी अथवा मार्ग संगीत कहकर पुकारा।

मार्गी संगीत ब्रह्मा जी ने भरत मुनि को सिखाया। भरत मुनि ने शंकर भगवान् के समक्ष इसका प्रदर्शन गन्धर्व और अप्सराओं से कराया। इस संगीत को केवल गन्धर्व ही गाया करते थे इसलिए इसे 'गान्धर्व संगीत' भी कहकर पुकारा जाता है। मार्गी संगीत अचल संगीत माना जाता है, क्योंकि उसमें थोड़ा-सा भी परिवर्तन नहीं किया जा सकता था। उसके नियम तथा बन्धन अत्यन्त कठोर थे। नियमों का पालन करते हुए परमेश्वर-प्राप्ति उसका मुख्य उद्देश्य था तथा लोकरंजन से उसका कोई सम्बन्ध नहीं था। मार्गी संगीत शब्द प्रधान था।

देशी संगीत अथवा गान- प्राचीनकाल में ऋषियों ने जब यह अनुभव किया कि परमेश्वर-प्राप्ति के अतिरिक्त संगीत में जनरंजन की अपूर्व शक्ति है, तभी से मार्गी संगीत के अतिरिक्त संगीत का दूसरा रूप प्रचार में आया। अब संगीत दो भागों

में विभाजित हो गया था। पहला संगीत वह था जिसका उद्देश्य परमेश्वर-प्राप्ति था तथा दूसरा संगीत वह था जिसका उद्देश्य जन-मन-रञ्जन था। वह 'संगीत जिसका उद्देश्य जन-मन-रञ्जन था, देशी संगीत कहलाया।

देशी संगीत का उद्देश्य जन-मन-रञ्जन था इसलिए लोक-रुचि के अनुसार उसमें अनेक परिवर्तन होने लगे। भिन्न-भिन्न प्रान्तों में कालानुसार इस संगीत में अन्तर आने लगा। विद्वानों का विचार है कि मार्गी संगीत में परिवर्तन करके देशी संगीत की उत्पत्ति हुई। देशी संगीत परिवर्तनशील होने के कारण वेदकालीन संगीत से बिल्कुल भिन्न हो गया। यहाँ तक कि आज जिस देशी संगीत को हम सुनते अथवा गाते हैं वह सब उसकी परिवर्तनशीलता का परिणाम है। प्राचीन समय में देशी संगीत को 'गान' कहकर पुकारा जाता था। 'संगीत रत्नाकर' नामक पुस्तक में लिखा है :

यत्तु वाग्गेयकारेण रचितं लक्षणान्वितम्।

देशीरागादिषु प्रोक्तं तद् गानं रञ्जनञ्जकम्॥

अर्थात् वाग्गेयकारों ने अपनी बुद्धि से प्राचीन निबद्ध संगीत में परिवर्तन करके एक नये संगीत की रचना की, जिसे गान अथवा देशी संगीत कहते हैं।

आधुनिक काल में जो संगीत हम भारत के अनेक प्रान्तों में सुनते हैं इसे देशी संगीत कहा जाता है। इस संगीत की विशेषता है कि समयानुसार इसमें बराबर परिवर्तन होते हैं। जन-रुचि पर आधारित होने के कारण प्रत्येक प्रान्त में इसका रूप अलग-अलग होता है। इस संगीत के नियम मार्गी संगीत की तरह कड़े नहीं हैं और इसमें स्वतन्त्रता भी अधिक है। मार्गी संगीत आजकल प्रचार में नहीं है क्योंकि प्राचीनकाल में ही इसका गायन समाप्त होने लगा था। सारे भारत में आजकल देशी संगीत का प्रचार है। इसकी आजकल भारत में दो पद्धतियाँ (हिन्दुस्तानी तथा कर्नाटकी) प्रचलित हैं। संक्षेप में हम मार्गी तथा देशी संगीत का अन्तर इस प्रकार समझ सकते हैं :

(१) मार्गी संगीत ईश्वर-निर्मित है तथा इसका उद्देश्य परमेश्वर-प्राप्ति है। देशी संगीत मानव-निर्मित है तथा इसका उद्देश्य जन-मन-रञ्जन है।

(२) मार्गी संगीत अचल है अर्थात् इसमें परिवर्तन नहीं होते हैं। देशी संगीत परिवर्तनशील है।

(३) मार्गी संगीत अनेक कठोर नियमों से बद्ध है तथा उसमें ... गायक को स्वतन्त्रता बिल्कुल नहीं है। देशी संगीत के नियम अधिक कठोर नहीं हैं तथा उसमें गायक अथवा वादक को अधिक स्वतन्त्रता प्राप्त है। जन-रुचि के अनुसार इसके नियम बदलते रहते हैं।

(४) मार्गी संगीत शब्द प्रधान है। देशी संगीत स्वर प्रधान है।

(५) मार्गी संगीत आजकल प्रचलित नहीं है। देशी संगीत का प्रचार आजकल सारे भारतवर्ष में है। इसकी दो पृथक् पृथक् पद्धतियाँ (उत्तरी तथा दक्षिणी) आधुनिक समय में प्रचलित हैं।

मार्गी तथा देशी संगीत के उपभेद- संगीत रत्नाकर नामक ग्रन्थ में शारङ्गदेव ने मार्गी तथा देशी संगीत के कुल मिलाकर १० उपभेद बतलाये हैं जो इस प्रकार हैं:

१) ग्राम-राग, (२) राग, (३) उपराग, (४) भाषा, (५) विभाषा, (६) अन्तर भाषा, (७) रागांग, (८) भाषांग, (९) उपांग तथा (१०) क्रियांग। इन उपभेदों में से प्रथम छह मार्गी संगीत के उपभेद माने जाते थे तथा अन्तिम चार देशी संगीत के उपभेद माने जाते थे अर्थात् मार्गी संगीत के उपभेद ग्राम-राग, राग, उपराग, भाषा, विभाषा, अन्तर भाषा तथा देशी संगीत के उपभेद रागांग, भाषांग, उपांग और क्रियांग माने जाते थे। इसी सिद्धान्त को प्राचीन दशविध राग-विभाजन भी कहा जाता था क्योंकि इस सिद्धान्त के अनुसार रागों का दस विभागों में वर्गीकरण होता था। ऊपर लिखे उपभेदों को इस प्रकार समझा जा सकता है।

अति प्राचीनकाल में मार्गी संगीत के अन्तर्गत 'जातियाँ' गायी जाती थीं। ये जातियाँ इस समय की प्रचलित स्वर-रचनाएँ हुआ करती थी जो ताल में बद्ध थीं। मार्गी संगीत के अन्तर्गत इन्हीं • विभिन्न स्वर-रचनाओं को ताल के साथ ईश्वर को प्रसन्न करने के लिए गाया जाता था। इस प्रकार जातियों में स्वरों का अधिक महत्त्व नहीं होता था, क्योंकि वे विशेष प्रकार की धुनें (Tunes) होती थीं और उन्हीं धुनों (Tunes) पर अनेक पद्य गाये जाते थे । मार्गी संगीत के प्रथम तीन उपभेद 'ग्राम-राग', 'राग' तथा 'उपराग' भी इसी प्रकार की स्वर-रचनाएँ थीं। इन जातियों को गाने की अनेक विधियाँ अथवा शैलियाँ प्रचलित थीं जिन्हें 'गीतियाँ' कहकर पुकारते थे । 'भाषा', 'विभाषा' तथा 'अन्तर भाषा'- ये तीन गीतियाँ

मार्गी संगीत के अन्तर्गत प्रचलित थीं। अन्य अनेक गीतियाँ भी थीं-जैसे शुद्धा, भिन्ना, गौड़ी, साधारण, बेसरा इत्यादि। मतङ्ग ने अपनी पुस्तक में सात प्रकार की गीतियों का वर्णन किया है, जो शुद्धा, भिन्ना, साधारण, भाषा, विभाषा, राग-गीति तथा गौड़ी थीं। इन गीतियों के अन्तर्गत मतङ्ग ने रागों की संख्या भी निश्चित की है। परन्तु आजकल प्रचार न होने से उनका महत्त्व भी नहीं है।

देशी संगीत के चार उपभेद- रागांग, भाषांग, क्रियांग तथा उपांग माने जाते थे।

रागांग राग-रागों को उनके नियमों का पालन करते हुए गाना अर्थात् शुद्ध शास्त्रीय राग रागांग राग कहलाते थे।

भाषांग राग- विभिन्न प्रान्तों से अलग-अलग रूपों में इन रागों को गाया जाता था। इनका शास्त्रीय आधार रागांग राग की तरह नहीं था और न उनके नियम ही कठोर थे।

क्रियांग राग- इन रागों में शास्त्र के नियमों का पालन तो किया जाता था परन्तु कभी-कभी सुन्दरता के लिए उनमें अन्य (राग में लगनेवाले) स्वरों का प्रयोग भी हो सकता था।

उपांग राग-जब रागांग राग के किसी स्वर को निकालकर उसके स्थान पर नया स्वर लगाते थे, जिससे राग का एक नया रूप बन जाता था, तब उस राग को उपांग राग कहते थे।

इस प्रकार मार्गी तथा देशी संगीत के चार उपभेद माने जाते थे। देशी संगीत के चार उपभेदों में जन-रञ्जन के लिए राग में परिवर्तन किया जा सकता था, परन्तु मार्गी संगीत के उपभेदों में नियम अधिक कठोर थे। इस कारण यह स्पष्ट है कि मार्गी संगीत में परिवर्तन के लिए कोई स्थान नहीं था जब कि देशी संगीत लोक-गीत के अनुसार बदलता रहता था। आजकल भी कर्नाटकी संगीत पद्धति के अन्तर्गत रागों के ये चार उपभेद माने जाते हैं।

स्वयं मूल्यांकन प्रश्न

8.8 देशी संगीत के कितने उपभेद हैं?

1) 4

2) 6

3) 8

4) 5

8.9 देशी संगीत का उपभेद कौन सा है?

1) स्थायी

2) तीव्रा

3) रागांग

4) कोई नहीं

8.10 देशी संगीत का उपभेद कौन सा है?

1) स्थायी

2) क्रियांग

3) तीव्रा

4) कोई नहीं

8.11 देशी संगीत का उपभेद कौन सा है?

1) स्थायी

2) तीव्रा

3) भाषांग

4) कोई नहीं

8.12 देशी संगीत का उपभेद कौन सा है?

1) उपांग

2) तीव्रा

3) मंदा

4) कोई नहीं

8.13 मार्गी संगीत की प्रचलित गितियाँ कितनी हैं?

1) 4

2) 3

3) 10

4) कोई नहीं

8.14 मार्गी संगीत के अंर्तगत प्रचलित गिति पहचानों।

1) भाषा

2) राग

3) जोगिया

4) कोई नहीं

8.15 मार्गी संगीत के अंर्तगत प्रचलित गिति पहचानों।

1) जोगिया

2) राग

3) विभाषा

4) कोई नहीं

8.16 मार्गी संगीत के अंर्तगत प्रचलित गिति पहचानों।

1) राग

2) अंतर भाषा

3) जोगिया

4) कोई नहीं

8.5 सारांश

ग्राम, मुर्च्छना व जाति और मार्गी तथा देशी संगीत विषय भारतीय शास्त्रीय संगीत का एक महत्वपूर्ण विषय है, जिसके बिना अच्छे संगीत की कल्पना भी नहीं की जा सकती। मूर्छना और ग्राम के अभ्यास से शास्त्रीय संगीत मे तैयारी और

परिपक्क्वता आती है, जो श्रोताओं को अनायास ही मंत्रमुग्ध करती हैं तथा साथ ही मार्गी और देशी संगीत के अध्ययन से किन्हीं भी दो या इससे अधिक संगीत विधाओं के बीच अंतर जानने योग्य होगा।

8.6 शब्दावली

- राग (Raga): संगीत का एक विशेष संरचनात्मक पद्धति, जो स्वरों के विशेष क्रम का उपयोग करके भावनात्मक और मनोरंजन को व्यक्त करता है।
- ताल (Taal): सप्तक के स्वरों को जब अलंकारों के रूप मे यार राग मे तानों या तोड़ों के रूप मे ताल के साथ बजाया जाता है तो श्रोता उसे सुनकर अनायास ही मंत्रमुग्ध हो जाता है। संगीत में अंकित समय स्तर को ताल कहा जाता है, जो गायन या वादन के साथ समय की गणना करने में मदद करता है।
- लय (Lay): संगीत में गति या चलन को लय कहा जाता है, जो ताल की गति को निर्दिष्ट करता है।
- रागिनी (Ragini): रागों की सहायक संगीत पद्धति जिसमें संगीत रागों के विभिन्न अनुभवों और भावों को व्यक्त करने के लिए मेलोडी और ताल का उपयोग किया जाता है।
- श्रुति (Shruti): संगीत में सबसे छोटे स्वर को श्रुति कहा जाता है, जो स्वर स्थान पर किसी भी विस्तार में पाया जा सकता है। श्रुतियों से ही सप्तक के स्वरों का निर्माण हुआ है।
- स्वर (Swar): संगीत में विभिन्न ऊर्जाओं को स्थान देने वाले तारों को स्वर कहा जाता है, जो संगीत के मूल भाग हैं।
- मेलोडी (Melody): संगीत में स्वरों के विशेष क्रम का एक संरचित और आकर्षक संयोजन, जिससे एक गाना या संगीत कविता का निर्माण होता है।
- सितार (Sitar): भारतीय शास्त्रीय संगीत का ऐसा तंत्री वाद्य यंत्र जो आज किसी भी परिचय का मोहताज नहीं रह गया है।

8.7 स्वयं जांच अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

आत्म-मूल्यांकन प्रश्न 1

8.1) उत्तर: 1

8.2) उत्तर: 3

8.3) उत्तर: 2

8.4) उत्तर: 1

8.5) उत्तर; 3

8.6) उत्तर: 2

8.7) उत्तर: 3

आत्म-मूल्यांकन प्रश्न 2

8.8) उत्तर: 1

8.9) उत्तर: 3

8.10) उत्तर: 2

8.11) उत्तर: 3

8.12) उत्तर: 1

8.13) उत्तर: 2

8.14) उत्तर: 1

8.15) उत्तर: 3

8.16) उत्तर: 2

8.8 संदर्भ

भातखंडे, विष्णुनारायण. (1970). कर्मिक पुस्तक मलिका. खंड 1-6, संगीत कार्यालय हाथरस।

श्रीवास्तव, हरिश्चद्र. (2015). राग परिचय (भाग 1), संगीत सदन प्रकाशन, इलाहबाद।

मृत्युंजय, डॉ. शर्मा. (2000). संगीत मैनुअल. ए.जी. पब्लिकेशन, दिल्ली।

श्रीवास्तव, हरिश्चद्र. (2010). राग परिचय (भाग 4), संगीत सदन प्रकाशन, इलाहबाद।

प्रो. केशव शर्मा द्वारा साक्षात्कार से प्राप्त जानकारी।

डॉ. मृत्युंजय शर्मा द्वारा साक्षात्कार से प्राप्त जानकारी।

डॉ. निर्मल सिंह द्वारा साक्षात्कार से प्राप्त जानकारी।

8.9 अनुशंसित पठन

श्रीवास्तव, हरिश्चद्र. (2015). राग परिचय (भाग 2), संगीत सदन प्रकाशन, इलाहबाद।

श्रीवास्तव, हरिश्चद्र. (1998). मधुर स्वरलिपि संग्रह. संगीत सदन प्रकाशन, इलाहबाद।

8.10 पाठगत प्रश्न

प्रश्न 1. ग्राम, मुर्च्छना व जाति विषय का परिचय लिखिए।

प्रश्न 2. ग्राम, मुर्च्छना व जाति अर्थ विस्तार और उदाहरण सहित लिखें।

प्रश्न 3 मार्गी तथा देशी संगीत का अर्थ विस्तार सहित लिखें।

प्रश्न 4. मार्गी तथा देशी संगीत का अर्थ और इन के प्रकारों को विस्तार सहित लिखें।

महत्त्वपूर्ण प्रश्न- कार्यभार

प्रश्न 1. ताल शब्द का अर्थ एवं परिभाषा और ताल के प्राणों का विस्तार सहित वर्णन करें।

प्रश्न 2.गायकों के गुण अवगुण और आविर्भाव और तिरोभाव का अर्थ विस्तार सहित लिखिए।

प्रश्न 3. तीनताल और दादरा ताल का परिचय एवं दादरा ताल की एकगुण और दुगुण लिखिए।

प्रश्न 4. रागों के समय सिद्धांत पर व्यस्तर से प्रकाश डालें।

प्रश्न 5 तानपूरा और सितार वाद्य यंत्र की उत्पत्ति विकास और इसके अंगों का सचित्र वर्णन करें।

प्रश्न 6. पंडित भीमसेन जोशी और स्वर कोकिला लता मंगेशकर का संक्षिप्त जीवन परिचय और इनके सांगीतिक योगदान पर विस्तृत वर्णन कीजिए।

प्रश्न 7. भारतीय शास्त्रीय संगीत मे प्रयुक्त तंत्री वाद्य यंत्रों की आधारभूत जानकारी विषय पर तंत्री वाद्यों के प्रकारों सहित विस्तार से प्रकाश डालें।

प्रश्न 8. ग्राम, मुर्च्छना व जाति और मार्गी और देशी संगीत विषय का परिचय लिखिए।